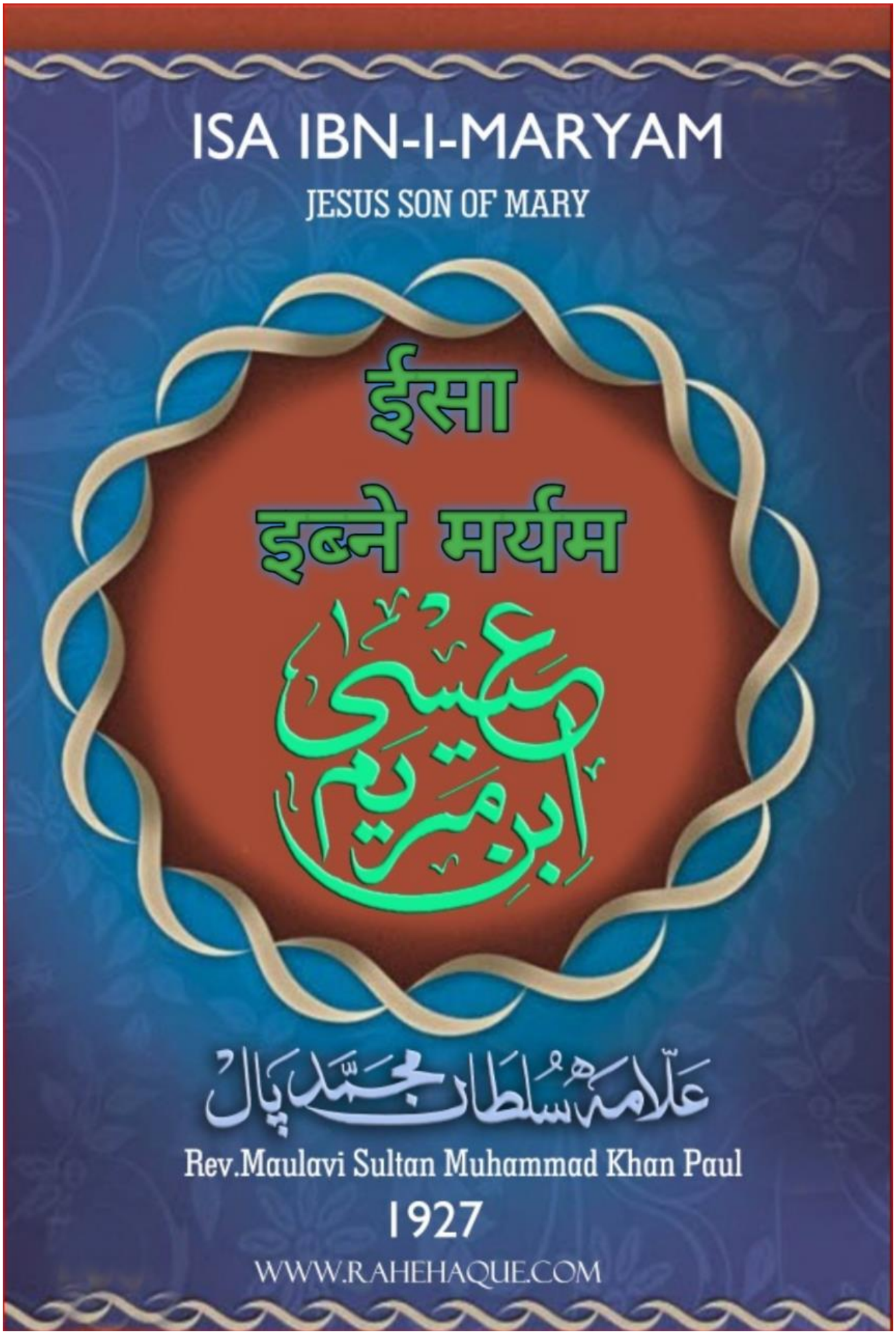
ISA IBN-I-MARYAM
JESUS SON OF MARY
ईसा
इब्ने मर्यम
عیسیٰ
ابنِ مریم
علامہ سلطان محمد پال
Rev.Maulavi Sultan Muhammad Khan Paul
1927
WWW.RAHEHAQUE.COM

بِسۡمِ اللّٰہِ الرَّحۡمٰنِ الرَّحِیۡمِ

إِنَّمَا الْمَسِيحُ عِيسَى ابْنُ مَرْيَمَ رَسُولُ اللهِ وَكَلِمَتُهُ أَلْقَاهَا إِلَى مَرْيَمَ وَرُوحٌ مِّنْهُ

(سورہ نساء ۱۷۱)

Isa-Ibn-Mariam

By

The Late Rev Mulana

Sultan Muhammad Paul Kabli Afghan

ईसा इब्ने मर्यम

मन तस्नीफ़

ज़बद-उल-मुतकल्लिमीन सुल्तान-उल-मुनाज़िरीन

पादरी मौलवी सुल्तान मुहम्मद ख़ान पाल साहब काबुली अफ़्ग़ान (मुल्ला)

July 1927

Rev Mulawai Sultan Muhammad Paul

1881-1963

फेहरिस्त मज़ामीन

फेहरिस्त मज़ामीन 4

दीबाचा नाशिर 7

हिस्सा अव़्वल 10

विलादत-ए-हज़रत ईसा 10

तम्हीद 10

इन्जील की रिवायत और तवारीख़ 11

हज़रत ईसा अलैहिस्सलाम का नसब नामा 13

लफ़्ज़ आल पर बहस 21

यहूदीयों में सिलसिला नसब 21

क़ुर्आन शरीफ़ से मर्यम सिद्दीक़ा के यहूदी होने का सबूत 22

मर्यम को बिंत-ए-इमरान और उख़्त-ए-हारून कहने की रम्ज़ 23

इंजीलों में बाहम इख़्तिलाफ़ 25

मसअला विलादत-ए-मसीह व अयात व इन्जील व क़ुर्आन 27

दयानतदार नक़्क़ाल 27

मुदीर साहब निगार की इन्जील फ़हमी 28

क़ुर्आन मजीद से विलादत-ए-मसीह पर बहस 30

क़ुर्आन मजीद में मसीह की विलादत बग़ैर बाप के बवज़ाहत मौजूद है 33

लफ़्ज़ कलमा और मुदीर साहब निगार की अरबी दानी 34

मुदीर साहब निगार की अरबी दानी का मज़ीद सबूत 41

नियाज़ साहब का अपने मुँह से इक़रार कि मसीह ख़ुदा का बेटा है 42

وَّلَمْ يَمْسَسْنِيْ بَشَرٌ पर बहस 43

मसीह की विलादत बे-पिदर (बगैर बाप) के पाँच सबूत 46

हज़रत ईसा के बग़ैर बाप पैदा होने का पहला सबूत लफ़्ज़ كذالك (कज़ालिक) 46

हज़रत ईसा के बग़ैर बाप पैदा होने का दूसरा सबूत लफ़्ज़ "हय्यिन" (هَيِّنٌ) 48
हज़रत ईसा के बग़ैर बाप पैदा होने का तीसरा सबूत وَكُنتُ نَسْيًا مَّنسِيًّا 49
हज़रत ईसा के बग़ैर बाप पैदा होने का चौथा सबूत وَجَعَلْنَٰهَا وَٱبْنَهَآ ءَايَةً لِّلْعَٰلَمِينَ 50
पहली ग़लती.....51
दूसरी ग़लती.....52
हज़रत ईसा के बग़ैर बाप के पैदा होने का पांचवां सबूत وَبَرًّۢا بِوَالِدَتِى 53
हर्फ़ ف व लफ्ज़ كان पर बहस और हज़रत नियाज़ के मुतज़ाद अक़्वाल.....55
इस्लाम और विलादत-ए-मसीह का मसअला.....62
दायरे इस्लाम से ख़ारिज.....62

हिस्सा दोम.....67

وَرَافِعُكَ إِلَىَّ 67
बहस-ए-माफ़ौक़ का ख़ुलासा.....75
हज़रत ईसा ब-जसद-ए-अंसरी (जिस्म समेत) आस्मान पर ज़िंदा हैं.....76
नुक्ता.....77
दूसरा नुक्ता.....80
इमाम राग़िब और इमाम राज़ी पर तोहमत.....82
बहस-ए-माफ़ौक़ का नतीजा.....85

इन्जील जलील और हज़रत ईसा की मौत व रफ़अ.....86

हज़रत ईसा (येसू) का पकड़ा जाना.....86
यहूदीयों की सदर अदालत में सय्यदना ईसा के मुक़द्दमे की पेशी.....87
पिन्तुस पीलातुस की कचहरी में सय्यदना ईसा के मुक़द्दमे की पेशी.....87
रूमी सिपाहीयों का सय्यदना ईसा को ठट्ठे में उड़ाना.....88
सय्यदना ईसा का सलीब दिया जाना और लान-तान उठाना.....89
सय्यदना ईसा का मरना.....89
सय्यदना ईसा का दफ़न होना.....90
सय्यदना ईसा का जी उठना.....90

सय्यदना ईसा का जी उठकर शागिर्दों को दिखाई देना 91
सय्यदना ईसा का आस्मान पर जाना 92
इन्जील के सलीबी वाक़ियात व क़ुर्आन 92
हज़रत रूह-उल्लाह की तकालीफ़ 93
चंद जलील-उल-क़द्र मुसलमान भी हमसे मुत्तफ़िक़ हैं 95
आयत وَمَاقَتَلُوْهُوَمَاصَلَبُوْهُ की मसीहयाना तफ़्सीर 95
उलमा-ए-अहले-सुन्नत वल-जमाअत से ख़िताब 97
जमाअत अहमदिया और उनके हम-ख़यालों से ख़िताब 98

हिस्सा सोम 99

मोअ़जज़ात-ए-मसीह 99
बहस-ए-माफ़ौक़ का मलहज़ 104
आयत माफ़ौक़ की तफ़्सीर हज़रत मिर्ज़ा ग़ुलाम अहमद क़ादियानी की तरफ़ से 108
लफ़्ज़ अख्लक़ (اخلق) पर बहस 111

दीबाचा नाशिर

हिन्दुस्तान की मशहूर इस्लामी रियासत भोपाल के दार-उल-सल्तनत से मौलाना नियाज़ साहब की ज़ेर इदारत **"निगार"** नामी एक माहवार रिसाला कई सालों से निहायत आब व ताब से शाएअ हो रहा है। मुल्क के मुम्ताज़ जराएद अदबी में इस को नुमायां ख़ुसूसीयत हासिल है। मुदीर रिसाला हाज़ा ना सिर्फ एक आला पाये के आलिम और तजुर्बेकार सहीफ़ा निगार ही हैं बल्कि नई रोशनी ने आपके दिलो दिमाग पर यहां तक असर किया है कि आपकी शाबा रोज़ मसाई (कोशिश) का रुख़ इस तरफ़ है कि इस्लाम के हर खुले मसअले की कोई ना कोई तौजिया व तावील निकालें और गुज़श्ता तेराह (13) सदीयों की सूरत इस्लाम को मस्ख़ करके नए ज़माने के मुवाफ़िक़ रंग देने में कमाल कर दिखाएं। इस फ़न में आपने जो मुम्ताज़ ख़ुसूसीयत हासिल की वो ये है कि आप सर सय्यद अहमद ख़ां साहब की नेचरीयत (फ़ित्रत) और तक़द्दुस मआब मौलवी मुहम्मद अली साहब एम॰ ए॰ अमीरे जमाअत अहमदिया लाहौर की अहमदियत को बाहम मख़लूत करके इस्लाम की ऐसी सूरत व शक्ल बना रहे हैं कि अस्रे-हाज़रा की तन्क़ीद आला के हमलों से बज़अ़म (गुमान के साथ) ख़ुद इसे मसऊन व मामून (महफ़ूज़ निगहबानी किया गया) कर दें। मगर असली इस्लाम के पैरौओं (मानने वालों) को आप से बेहद इख़्तिलाफ़ है जैसा कि इस किताब की तम्हीद-ए-मुसन्निफ़ से ज़ाहिर है।

गुज़श्ता साल **"निगार"** में आपने ईसा इब्ने मर्यम की विलादत-ए-बे-पिदर (बग़ैर बाप) के मोअजज़ात और रफ़अ़ आस्मानी (आस्मान पर उठाया जाना) और मर्यम बतुला (कुँवारी) के रूह-उल-क़ुद्स से हामिला होने का इन्कार किया और एक तवील व बसीत (वसीअ) आलिमाना मज़्मून लिख कर अपने इन्कार यानी **"नेचरी और अहमदी इस्लाम"** को हक़ साबित करने की सर तोड़ कोशिश की। जब इस मज़्मून को हमारे मुहतरम दोस्त जनाब पादरी बरकत-उल्लाह साहब एम॰ ए॰ ने मुतालआ किया तो फ़ील-फ़ौर मुझे लिखा कि इस का जवाब मसीहियों की तरफ़ से ज़रूर देना चाहिए। चूँकि मौलाना नियाज़ साहब ने इन तमाम तावीलात तौजीहात को जो सर सय्यद अहमद ख़ां साहब और मौलवी मुहम्मद अली साहब की ईजादात (पैदावार) ख़ास हैं, एक जगह निहायत ख़ूबी और क़ाबिलीयत से मुरत्तिब किया। इसलिए बिला-रैब (बग़ैर शक) आपके ख़यालात मौजूदा ज़माने के आला तब्क़े के ताअ़लीम-याफ़्ता अहले इस्लाम के मोअ़तक़िदात (एतिक़ाद रखने वाले) का आईना कहे जा सकते हैं। पस

लाज़िम आया कि ऐसे आला पाये के इल्मी एतराज़ात की तर्दीद के लिए हिन्दुस्तान भर का बेहतरीन मसीही फ़ाज़िल जो इस्लामियात से आला वजह-उल-कमाल वाक़िफ़ हो, तलाश किया जाये। हर चहार एतराफ़ नज़र दौड़ाने के बाद मेरी नज़र इंतिख़ाब पादरी मौलवी सुल्तान मुहम्मद ख़ां साहब अफ़्ग़ान काबुली (मुल्ला) पर पड़ी। आपकी ज़हनी क़ाबिलीयत, इल्मी लियाक़त और अदबी फ़ज़ीलत हिन्दुस्तान भर में मशहूर व मुसल्लम हो चुकी है। आप मुल्क भर के ज़बरदस्त-तरीन उलमा फ़ुज़ला-ए-इस्लाम से अक्सर मुबाहिसे कर चुके हैं और हर जगह आपको ख़ुदा-ए-अज़ीज़-उल-हकीम ने ऐसी फ़त्ह व ज़फ़र (कामयाबी) अता फ़रमाई कि आज तमाम मज़्हबी तबक़ों में आपकी धूम मची हुई है।

जब इस सदी में इल्म व फ़ज़्ल को बेअंदाज़ तरक़्क़ी हासिल हुई तो ख़ुदा-ए-ग़य्यूर ने पादरी सुल्तान मुहम्मद ख़ां साहब को अपनी ख़ास क़ुव्वत अता करके इस मुल्क में मबऊस किया (भेजा) वो तालीमयाफ्ता मुसलमानों को दीने हक़ की तरफ़ रहनुमाई करें। आपने ना सिर्फ तक़रीरी मुनाज़रों ही में मसीही दीन की अज़मत का अलम (झंडा) बुलंद किया बल्कि मुतअद्दिद (बहुतसी) तसानीफ़ की बदौलत हज़ारों लाखों बंदगान-ए-ख़ुदा को रुहानी फ़ायदा पहुंचाया है। अब आपने ये किताब तस्नीफ़ फ़र्मा कर उन मुसलमानों के दिलों को ख़ुदावंद कबीर की हक़ीक़ी मंशा की जानिब रुजू कराने का क़ाबिल-ए-तहसीन व आफ़रीन काम किया है। जो आजकल के आला उलूम व फ़ुनून से बहरा अंदोज़ हो चुके हैं।

अगर बिरादरान-ए-इस्लाम पादरी साहब ममदूह-उल-सदर की दीगर तसानीफ़ का जो अपने मुनाज़राना रंग में यकता और हिन्दुस्तान भर में मशहूर व मारूफ़ हैं। मुतालआ करें तो उनके शुकूक़ व शुब्हात जो वो मसीहिय्यत व मसीह की निस्बत अपने दिलों में रखते हैं यक़ीनन दूर हो जाएंगे। आपकी तसानीफ़ में ख़ास ख़ूबी ये है कि क़ुर्आन मजीद और अहादीस सहीहा से आप इस क़द्र इस्तिदलाल (दलील देना) फ़र्माते हैं कि अगर आपके नाम के साथ पादरी का लफ़्ज़ चस्पाँ ना किया जाये तो यही मालूम होता है कि किसी मुसलमान आलिम ने ही किताब तस्नीफ़ फ़रमाई है। आप मसीही होने से पेश्तर इस्लामी ताअ़लीम के मुतालए में ज़िंदगी का एक हिस्सा ग़ालिब गुज़ार चुके थे। बंबई में ज़िया-उल-इस्लाम की आप ही ने बुनियाद डाली थी जो आज तक जारी है। फ़ारसी आपकी मादरी ज़बान है। अरबी के यकता आलिम हैं। क़ुर्आन शरीफ़, अहादीस, सीरत, मन्तिक़, फ़ल्सफ़ा में महारत ताम्मा (तमाम) हासिल है। और जब हम इन बेअंदाज़ ख़ूबीयों की जानिब गहरी निगाह डालते हैं तो हमारा

ज़हन फ़ौरन उस क़ादिर-ए-मुतलक़ ख़ुदा की तरफ़ मुंतक़िल हो जाता है जो हर सदी में इस क़िस्म की मुम्ताज़ हस्तियाँ अपने नाम को जलाल देने की ख़ातिर बरपा करता है। मसीहिय्यत के मोअजज़ात में से बिला-शुब्हा ये भी एक मोअजिज़ा है। काबुली अफ़्ग़ान होने के बावजूद सलीस और बामुहावरा उर्दू में ऐसी रवानी से कलाम कर सकते हैं कि अहले देहली व लखनऊ पर सबक़त ले गए हैं। ये रिसाला भी आपने चंद ही अय्याम (दिनों) में मुरत्तिब करके भेज दिया। हाँ मौलाना मौलवी मुहम्मद अली साहब के **"निकात-उल-क़ुर्आन"** के हवालेजात और हिस्सा अव्वल के आख़िर में **"ख़ारिज-अज़-इस्लाम"** ख़ाकसार के मुरत्तिब कर्दा हैं। ख़ुदा अपने नाम की ख़ातिर अहले हिन्द को तौफ़ीक़ बख़्शे कि वो ताअ़स्सुब से ख़ाली-उल-ज़हन हो कर राहे हक़ की पैरवी करें।

(ख़ान)

हिस्सा अव़्वल

विलादत-ए-हज़रत ईसा

तम्हीद

हज़रत नियाज़ की बेनियाज़ी

जुलाई 1926 ई॰ के रिसाला **"निगार"** में और इस के बाद अगस्त 1926 ई॰ के निग़ाराना मुलाहिज़ात में हज़रते नियाज़ ने उन तमाम मोअतक़िदात से अपनी बेनियाज़ी का इज़्हार किया है जो हज़रते खिज़र और अला-उल-ख़ुसूस हज़रत ईसा अलैहि सलवात वस्सलाम के मुताल्लिक़ इस्लाम में जुज़-वल-एनिफ़क (वो हिस्सा जो अलैहदा ना हो सके) समझे जाते हैं। **"निगार"** की इस बे-बाकाना हरकत को देखकर "जनाब मुहम्मद अकबर ख़ां साहब" ने हज़रत नियाज़ की ख़िदमत में ज़ेल का मकतूब इरसाल किया :-

> "जुलाई के महीने में आप वजूद-ए-ख़िज़र से तो इन्कार ही कर चुके थे। लेकिन अगस्त के मुलाहिज़ात में किसी ईसाई जे॰ मार्टिन से ख़िताब करते हुए आपने हज़रत ईसा पर भी हाथ साफ़ कर दिया। मरादं चुनें कनंदु। उनका बिन बाप पैदा होना, अँधों, कोढ़ीयों को अच्छा करना, मुर्दों को जिलाना। मस्लूब होने के बाद आस्मान पर चला जाना, और अब तक ज़िंदा रहना ये तमाम वो बातें हैं जिनके आप मुन्किर मालूम होते हैं। लेकिन कलामे मजीद में सरीह आयात उनके मुताल्लिक़ पाई जाती हैं उनकी क्या तावील हो सकती है? मैं बहुत मुश्ताक़ हूँ कि इनकी बाबत भी आपके ख़यालात का इल्म हासिल करूँ। मैं उन आयात को इस जगह दर्ज नहीं करता। क्योंकि यक़ीनन वो आपके सामने होंगी और आप अपनी आदत के मुवाफ़िक़ उनका इस्तिक़सा (पूरी कोशिश करना) करके बहस फ़रमाएँगे।"

यज़्दाँ या दज़्दां

आप मकतूब माफ़ौक़ का जवाब सितंबर 1926 ई॰ के "निगार" में तहरीर फ़र्माते हैं कि :-

> "मैंने वजूदे ख़िज़र से इन्कार तो नहीं किया। लेकिन ये ज़रूर बयान किया है कि उनके मुताल्लिक़ जो रिवायत अवाम में मशहूर हैं वो क़ाबिल वसूक़ (यक़ीन) नहीं हैं और जिन अहादीस से इस्तिदलाल किया (दलील देना) जाता है वो साक़ित-उल-एतबार हैं। अब आप हज़रत ईसा के मुताल्लिक़ मुझ पर ये इल्ज़ाम रखते हैं कि मैंने उन पर भी अगस्त के मुलाहिज़ात में हाथ साफ़ कर दिया। सो बंदा-नवाज़ ये सफ़ाई मेरे हाथ की नहीं है बल्कि ख़ुद उस क़ुव्वत-ए-बरतर व आला की है जिसने उन्हें सूली से बचा लिया। और यह मुआमला "मर्दां चुनें कनंद" से मुताल्लिक़ है बल्कि यज़्दाँ चुनें कनंद से वाबस्ता है।"

अगर हज़रत नियाज़ की ख़ातिर नाज़ुक पर गिरां ना गुज़रे तो मैं अर्ज़ करूँगा कि ये हाथ की सफ़ाई उस ज़ाते बरतर व आला की नहीं है जिसने उन्हें मुर्दों में जिलाया। बल्कि सर सय्यद मर्हूम की है जिस को जनाब ने सारिक़ाना अंदाज़ से दुबारा नक़्ल किया है। पस ये मुआमला "यज़्दाँ चुनें कनंद" से वाबस्ता नहीं है, बल्कि "दज़्दां[1] चुनें कनंद" से वाबस्ता है।

इन्जील की रिवायत और तवारीख़

इस के बाद आप तारीख़ कामिल इब्ने असीर और इब्ने खल्दून के चंद दुम बरीदा (दुम कटा हुआ) इक़्तिबासात हवाला क़लम करके फ़र्माते हैं कि :-

---

[1] क़ारईन किराम ज़रा तकलीफ़ उठा कर सर सय्यद मरहूम की तफ़सीर सूरह आले-इमरान और सूरह माइदा को **"निगार"** के इस मज़मून से मुक़ाबला कर देखें और हज़रत नियाज़ की सारिक़ाना अदा की दाद दें। (सुलतान)

> "चूँकि तारीख़ की किताबों और इन्जील की रिवायतों में बाहम इस क़द्र इख़्तिलाफ़ है कि हज़रत ईसा की ज़िंदगी के मुताल्लिक़ किसी वाक़िये की सही तहक़ीक़ इनकी मदद से नहीं हो सकती। और ख़ुद रसूल-अल्लाह के ज़माने में मसीह के मुताल्लिक़ अजीबो-गरीब एतिक़ाद लोगों में राइज थे। यहां तक कि बाअज़ उनको ख़ुदा का बेटा और बाअज़ नाजायज़ मौलूद (पैदा होने वाला) कहते थे, इसलिए ज़ाहिर है कि हमको क़ुर्आन-ए-पाक पर ग़ौर करने से हक़ीक़त का इल्म हो सकता है जिसमें तमाम लगू (बेहूदा) एतिक़ादात-ए-राइजा के ख़िलाफ़ सही वाक़ियात की ख़बर दी गई है।"

क़िब्ला ! काश आप क़ुर्आन पाक पर ग़ौर करते ! लेकिन आपने ऐसा नहीं किया। क़ुर्आन पाक का नाम लेकर आपने सर सय्यद मर्हूम की कासा-लैस (ख़ुशामदी) को काफ़ी समझा। आपके दो एक अरबी जुमलों को देखकर मुझको तो यहां तक शुब्हा होता है कि शायद आप इस की इबारत भी रवानी के साथ नहीं पढ़ सकते हैं। चाहिए ये कि आप इस के मुतालिब पर ग़ौर करें। क़ुर्आन मजीद पर ग़ौर ना करने का ही ये नतीजा है कि आपको तारीख़ की किताबों और इन्जील की रिवायतों में इस क़द्र इख़्तिलाफ़ मालूम होता है कि हज़रत ईसा की ज़िंदगी के मुताल्लिक़ किसी वाक़िये की सही तहक़ीक़ नहीं कर सकते।

मैंने आपके तारीख़ी इक़्तिबासात का एक से ज़्यादा बार इआदा किया। मुझको तो एक बात भी ऐसी मालूम नहीं हुई जो इन्जील की रिवायतों के बरख़िलाफ़ हो। हक़ीक़त ये है कि इस्तिलाहात के ना समझने की वजह से आपने इज्माल और तफ़्सील को ग़लती से इख़्तिलाफ़ समझ लिया है यानी जिन उमूर को इन्जील मुक़द्दस ने इज्मालन बयान किया है, उन्ही उमूर को इब्ने असीर और इब्ने खल्दुन रहमतुल्लाह अलैहा ने क़द्रे तफ़्सील के साथ बयान किया है, लेकिन लुत्फ़ की बात ये है कि वाक़िया विलादत मसीह के मुताल्लिक़ जिन बातों का बयान इब्ने असीर और इब्ने खल्दून ने किया है उनमें से एक का भी बयान अनाजील में नहीं है बल्कि उनमें से बहुत से वाक़ियात का ज़िक्र क़ुर्आन पाक में है। पस अगर कुछ इख़्तिलाफ़ है तो क़ुर्आन पाक की रिवायतों और तारीख़ की किताबों में है ना कि इन्जील की रिवायतों और तारीख़ की किताबों में।

अलबत्ता इन्जील की रिवायतों और तारीख़ की किताबों में उस वक़्त इख़्तिलाफ़ होता जब आप किसी तारीख़ की किताब से ये साबित कर सकते कि हज़रत ईसा अलैहि सलातो वस्सलाम की पैदाइश बाप की वसातत से हुई थी। लेकिन हम तहद्दी (चेलेंज) के साथ गुज़ारिश करते हैं कि आप हरगिज़ ये नहीं कर सकते। क्योंकि तमाम मौअर्रखीने इस्लाम ने बिल-इत्तिफ़ाक़ इस को तस्लीम कर लिया है कि हज़रत ईसा की पैदाइश बिला वालिद (बगैर बाप) हुई थी।

हज़रत ईसा अलैहिस्सलाम का नसब नामा

आप लिखते हैं कि,

> "हज़रत ईसा का ज़िक्र यूं तो कलाम मजीद में कसरत से पाया जाता है लेकिन उमूर ज़ेर-ए-बहस पर ग़ौर करने के लिए हमको सूरह आले-इमरान, सूरह माइदा, और सूरह मर्यम का मुतालआ करना चाहिए। सूरह मर्यम में सिर्फ उनकी पैदाइश के वाक़ियात दर्ज हैं और सूरह माइदा में सिर्फ उनके मोअजज़ात का ज़िक्र है (जिनमें अँधों, कोढ़ीयों को अच्छा करना मर्दों को जिलाना वग़ैरह शामिल है) और सूरह आले-इमरान में पैदाइश से लेकर आख़िर तक तमाम वाक़ियात का बयान है इसलिए हम सबसे पहले सूरह आले-इमरान और सूरह मर्यम की उन आयात को दर्ज करते हैं जिनमें हज़रत ईसा की पैदाइश का हाल दर्ज है।"

(सूरह आले-इमरान 45 ता 47)

اِذْ قَالَتِ الْمَلٰٓئِكَةُ يٰمَرْيَمُ اِنَّ اللّٰهَ يُبَشِّرُكِ بِكَلِمَةٍ مِّنْهُ ۖ اسْمُهُ الْمَسِيْحُ عِيْسَى ابْنُ مَرْيَمَ وَجِيْهًا فِي
الدُّنْيَا وَالْاٰخِرَةِ وَمِنَ الْمُقَرَّبِيْنَ وَيُكَلِّمُ النَّاسَ فِي الْمَهْدِ وَكَهْلًا وَّمِنَ الصّٰلِحِيْنَ قَالَتْ رَبِّ اَنّٰى
يَكُوْنُ لِيْ وَلَدٌ وَّلَمْ يَمْسَسْنِيْ بَشَرٌ ۭ قَالَ كَذٰلِكِ اللّٰهُ يَخْلُقُ مَا يَشَاۗءُ ۭ اِذَا قَضٰٓى اَمْرًا فَاِنَّمَا يَقُوْلُ لَهٗ
كُنْ فَيَكُوْنُ

तर्जुमा : "जब कहा फ़रिश्तों ने ऐ मर्यम अल्लाह ख़ुशख़बरी देता है तुझको अपनी तरफ़ से एक कलमे की उस की बाबत जिसका नाम मसीह ईसा मर्यम का बेटा होगा। जो दुनिया व आख़िरत में साहिबे वजाहत होगा। ख़ुदा के मुक़र्रबीन में से होगा।

लोगों से कलाम करेगा गहवारे गोद में और बुढ़ापे में और होगा नेकों में से।

मर्यम ने कहा, ऐ परवरदिगार मेरे लड़का कैसे हो सकता है दरां हालेका मुझे किसी मर्द ने नहीं छुआ। ख़ुदा ने कहा यही होगा अल्लाह पैदा करता है जो चाहता है। जब वो किसी काम का करना ठहरा लेता है तो कह देता है होजा। और वो काम हो जाता है।"

(सूरह मर्यम आयत 16 ता 36)

وَاذْكُرْ فِي الْكِتٰبِ مَرْيَمَ اِذِ انْتَبَذَتْ مِنْ اَهْلِهَا مَكَانًا شَرْقِيًّا فَاتَّخَذَتْ مِنْ دُوْنِهِمْ حِجَابًا فَاَرْسَلْنَآ
اِلَيْهَا رُوْحَنَا فَتَمَثَّلَ لَهَا بَشَرًا سَوِيًّا قَالَتْ اِنِّيْٓ اَعُوْذُ بِالرَّحْمٰنِ مِنْكَ اِنْ كُنْتَ تَقِيًّا قَالَ اِنَّمَآ اَنَا رَسُوْلُ
رَبِّكِ لِاَهَبَ لَكِ غُلٰمًا زَكِيًّا قَالَتْ اَنّٰى يَكُوْنُ لِيْ غُلٰمٌ وَّلَمْ يَمْسَسْنِيْ بَشَرٌ وَّلَمْ اَكُ بَغِيًّا قَالَ كَذٰلِكِ
قَالَ رَبُّكِ هُوَ عَلَيَّ هَيِّنٌ وَلِنَجْعَلَهٗٓ اٰيَةً لِّلنَّاسِ وَرَحْمَةً مِّنَّا وَكَانَ اَمْرًا مَّقْضِيًّا فَحَمَلَتْهُ فَانْتَبَذَتْ بِهٖ
مَكَانًا قَصِيًّا فَاَجَآءَهَا الْمَخَاضُ اِلٰى جِذْعِ النَّخْلَةِ قَالَتْ يٰلَيْتَنِيْ مِتُّ قَبْلَ هٰذَا وَكُنْتُ نَسْيًا
مَّنْسِيًّا فَنَادٰىهَا مِنْ تَحْتِهَآ اَلَّا تَحْزَنِيْ قَدْ جَعَلَ رَبُّكِ تَحْتَكِ سَرِيًّا وَهُزِّيْٓ اِلَيْكِ بِجِذْعِ النَّخْلَةِ تُسٰقِطْ
عَلَيْكِ رُطَبًا جَنِيًّا فَكُلِيْ وَاشْرَبِيْ وَقَرِّيْ عَيْنًا فَاِمَّا تَرَيِنَّ مِنَ الْبَشَرِ اَحَدًا فَقُوْلِيْٓ اِنِّيْ نَذَرْتُ لِلرَّحْمٰنِ
صَوْمًا فَلَنْ اُكَلِّمَ الْيَوْمَ اِنْسِيًّا فَاَتَتْ بِهٖ قَوْمَهَا تَحْمِلُهٗ ۭ قَالُوْا يٰمَرْيَمُ لَقَدْ جِئْتِ شَيْـــًٔا فَرِيًّا يٰٓاُخْتَ
هٰرُوْنَ مَا كَانَ اَبُوْكِ امْرَاَ سَوْءٍ وَّمَا كَانَتْ اُمُّكِ بَغِيًّا فَاَشَارَتْ اِلَيْهِ ۭ قَالُوْا كَيْفَ نُكَلِّمُ مَنْ كَانَ فِي
الْمَهْدِ صَبِيًّا قَالَ اِنِّيْ عَبْدُ اللّٰهِ ۭ اٰتٰنِيَ الْكِتٰبَ وَجَعَلَنِيْ نَبِيًّا وَّجَعَلَنِيْ مُبٰرَكًا اَيْنَ مَا كُنْتُ ۠ وَاَوْصٰنِيْ
بِالصَّلٰوةِ وَالزَّكٰوةِ مَا دُمْتُ حَيًّا وَّبَرًّۢا بِوَالِدَتِيْ ۡ وَلَمْ يَجْعَلْنِيْ جَبَّارًا شَقِيًّا وَالسَّلٰمُ عَلَيَّ يَوْمَ وُلِدْتُّ وَ
يَوْمَ اَمُوْتُ وَيَوْمَ اُبْعَثُ حَيًّا ذٰلِكَ عِيْسَى ابْنُ مَرْيَمَ ۚ قَوْلَ الْحَقِّ الَّذِيْ فِيْهِ يَمْتَرُوْنَ مَا كَانَ لِلّٰهِ اَنْ
يَّتَّخِذَ مِنْ وَّلَدٍ ۙ سُبْحٰنَهٗ ۭ اِذَا قَضٰٓى اَمْرًا فَاِنَّمَا يَقُوْلُ لَهٗ كُنْ فَيَكُوْنُ وَاِنَّ اللّٰهَ رَبِّيْ وَرَبُّكُمْ فَاعْبُدُوْهُ ۭ
هٰذَا صِرَاطٌ مُّسْتَقِيْمٌ

तर्जुमा : “और ज़िक्र कर किताब में मर्यम का जब वो अलैहदा हुई अपने लोगों से एक मशरिक़ी मकान में।

फिर कर लिया उसने उनकी तरफ़ से पर्दा पस भेजा हमने उस के पास अपनी रूह को जो बन गई उस के सामने एक पूरा आदमी।

मर्यम ने कहा मैं ख़ुदा की पनाह माँगती हूँ तुझसे अगरचे तू परहेज़गार हो।

उसने कहा मैं तो तेरे परवरदिगार की तरफ़ से पैग़ाम लेकर आया हूँ कि मैं तुझे एक पाकीज़े बेटा दूँगा।

मर्यम ने कहा मेरे बेटा कैसे हो सकता है दरां-हालीका मुझे किसी इन्सान ने नहीं छुआ और ना मैंने कभी बदकारी की।

फ़रिश्ते ने कहा ऐसा ही होगा तेरे रब ने कहा कि ये मेरे लिए आसान है और हम बनाएंगे। उस को निशानी लोगों के लिए और रहमत अपनी तरफ़ से और यह अम्र ठहराया हुआ है।

फिर हमल ठहरा मर्यम को और वो दूर चली गई।

फिर दर्दज़ा (दर्द) उस को एक खजूर की जड़ में ले गया। मर्यम ने कहा काश मैं इस से पहले ही मर गई होती और मिट जाती।

फिर उस को पुकारा किसी ने नीचे से कि रंजीदा ना हो। जारी किया है तेरे परवरदिगार ने नीचे एक चशमा।

तू खजूर को हिला वो तुझ पर तरो ताज़ा फल गिराएगा।

तू उसे खा और पी और ठंडी कर अपनी आँख, अगर तो किसी आदमी को देखे तो कह मैंने अल्लाह के नाम पर रोज़ा रखा है और मैं आज किसी से बात ना करूँगी।

फिर मर्यम अपने लड़के को क़ौम के पास लाई। उन्होंने कहा ऐ मर्यम तू अजीब चीज़ लाई है।

ऐ हारून की बहन ना तेरा बाप ख़राब आदमी था। और ना तेरी माँ ख़राब थी।

फिर इशारा किया मर्यम ने लड़के की तरफ़। लोगों ने कहा हम क्या बात करें इस से जो था एक लड़का गहवारे में।

ईसा ने कहा मैं ख़ुदा का बंदा हूँ। दी है उसने मुझे किताब और बनाया है मुझे नबी।

और मुझ को किया है बरकत वाला जहां कहीं मैं हूँ और मुझको हिदायत की है नमाज़ व रोज़े की जब तक मैं ज़िंदा रहूं।

और बनाया है मुझको नेकी करने वाला अपनी माँ के साथ और नहीं बनाया मुझे सरकश बद-बख़्त।

और सलाम हो मुझ पर जिस दिन मैं पैदा हुआ जिस दिन में मरूँगा और जिस दिन मैं ज़िंदा हो कर उठूंगा।

ये है सच्चा वाक़िया ईसा बिन मर्यम का जिसमें लोग इख़्तिलाफ़ करते हैं।

ख़ुदा के लिए मौज़ूं नहीं है कि उस के कोई बेटा हो। वो इस से पाक है वो जब किसी काम को करना चाहता है तो कह देता है हो जा और वो हो जाता है।

और बेशक ख़ुदा ही मेरा परवरदिगार है तो उसी की इबादत करो यही सीधा रास्ता है।"

क़ब्ल इस के कि हम कलाम मजीद की मज़्कूर बाला आयतों पर ग़ौर करें। ये मालूम कर लेना ज़रूरी है कि ख़ुदा ने हज़रत ईसा के नसब के मुताल्लिक़ क्या फ़रमाया है। सूरह अनआम में निहायत वज़ाहत के साथ ये बात बयान कर दी गई है कि हज़रत ईसा आले इब्राहिम से होंगे।

(सूरह अनआम आयात 83 ता 85)

وَتِلْكَ حُجَّتُنَآ اٰتَيْنٰهَآ اِبْرٰهِيْمَ عَلٰى قَوْمِهٖ ؕ نَرْفَعُ دَرَجٰتٍ مَّنْ نَّشَآءُ ؕ اِنَّ رَبَّكَ حَكِيْمٌ عَلِيْمٌ وَوَهَبْنَا لَهٗٓ اِسْحٰقَ وَيَعْقُوْبَ ؕ كُلًّا هَدَيْنَا ۚ وَنُوْحًا هَدَيْنَا مِنْ قَبْلُ وَمِنْ ذُرِّيَّتِهٖ دَاوٗدَ وَسُلَيْمٰنَ وَاَيُّوْبَ وَيُوْسُفَ وَمُوْسٰى وَهٰرُوْنَ ؕ وَكَذٰلِكَ نَجْزِى الْمُحْسِنِيْنَ وَزَكَرِيَّا وَيَحْيٰى وَعِيْسٰى وَاِلْيَاسَ ؕ كُلٌّ مِّنَ الصّٰلِحِيْنَ

तर्जुमा : और ये हमारी दलील थी जो हमने इब्राहिम अलैहिस्सलाम को उनकी क़ौम के मुक़ाबले में अता की थी। हम जिसके चाहते हैं दर्जे बुलंद कर देते हैं। बेशक तुम्हारा परवरदिगार दाना और ख़बरदार है।

और हमने उनको इस्हाक़ अलैहिस्सलाम और याक़ूब अलैहिस्सलाम बख़्शे (और) सबको हिदायत दी। और पहले नूह अलैहिस्सलाम को भी हिदायत दी थी और उनकी औलाद में से दाऊद और सुलेमान अलैहिस्सलाम और अय्यूब अलैहिस्सलाम और यूसुफ़ अलैहिस्सलाम और मूसा अलैहिस्सलाम और हारून अलैहिस्सलाम को भी। ये हम नेक लोगों को ऐसा ही बदला दिया करते हैं।

और ज़करीया अलैहिस्सलाम और यहया अलैहिस्सलाम और ईसा अलैहिस्सलाम और इल्यास अलैहिस्सलाम को भी। ये सब नेको कार थे।"

> "अब अगर हज़रत-ए-ईसा की विलादत बग़ैर बाप के तस्लीम की जाये और सिर्फ मादरी सिलसिला नसब पर लिहाज़ किया जाये तो देखना चाहिए कि मर्यम आल-ए-इब्राहिम या आल-ए-दाऊद से थीं या नहीं? कलाम मजीद में एक जगह मर्यम को बिंते-इमरान (इमरान की बेटी) कह कर पुकारा गया है और दूसरी जगह उख़्त हारून (हारून की बहन) के लक़ब से याद किया गया है। गोया इस से ये बात साबित होती है कि मर्यम के बाप का नाम इमरान था और हारून उनके भाई थे। इस पर ईसाई उलमा ने एतराज़ भी किया है कि हारून के ज़माने से मर्यम को क्या निस्बत हो सकती है। लेकिन वो इस रम्ज़ को नहीं समझे कि मर्यम को हारून की बहन कहना किसी हक़ीक़ी रिश्ते का इज़्हार नहीं है बल्कि सिर्फ इस मुमासिलत की बिना पर है कि जिस तरह हारून हिफ़ाज़त व खिदमत हैकल के लिए मामूर थे उसी तरह मर्यम की भी ज़िंदगी शुरू हुई। ये सही है कि मूसा की बहन का नाम भी मर्यम था लेकिन इस जगह मर्यम को उख़्त हारून (हारून कि बहन) कहने से ये नतीजा निकालना कि क़ुर्आन में ईसा की माँ मर्यम और मूसा की बहन मर्यम को एक ही हस्ती क़रार दिया है दुरुस्त नहीं हो सकता। इसलिए उख़्त हारून के अल्फ़ाज़ से

मर्यम के सिलसिल-ए-नसब पर तो कुछ रोशनी नहीं पड़ सकती। अब रह गया उनको इमरान की बेटी कहना सो यक़ीनन ये भी इसी लिहाज़ से कहा गया है जिस तरह उख़्त हारून के अल्फ़ाज़ को इस्तिमाल किया गया है। कलाम मजीद में "आल, उख़्त, इब्न या बिंत" वग़ैरह का इस्तिमाल बहुत वसीअ मअनी में हुआ है। और इन अल्फ़ाज़ से वो क़रीब का रिश्ता मुराद नहीं लिया गया है जो इन के मअनी से मुतबादिर होता है। इसलिए मर्यम को बिंत-ए-इमरान कहना ये मअनी नहीं रखता कि वाक़ई इमरान की बेटी थीं बल्कि इस से मक़्सूद ये ज़ाहिर करना है कि वो आले-इमरान में से थीं जिनकी बुज़ुर्गी के मुताल्लिक़ कलाम मजीद में ये आयत आई है।

(सूरह आले-इमरान 33)

اِنَّ اللّٰهَ اصْطَفٰۤى اٰدَمَ وَنُوْحًا وَّاٰلَ اِبْرٰهِيْمَ وَاٰلَ عِمْرٰنَ عَلَى الْعٰلَمِيْنَ

तर्जुमा : "ख़ुदा ने आदम और नूह और ख़ानदान इब्राहिम और ख़ानदान इमरान को तमाम जहां के लोगों में मुंतख़ब फ़र्मा था।"

मर्यम के वालिद कौन थे? ये अम्र बिल्कुल तारीकी में है। और इसी लिए ईसा का सिलसिला नसब दाऊद तक मुतय्यन नहीं हो सकता। और अगर मर्यम की विलादत भी बग़ैर बाप के तस्लीम करली जाये तो जैसा कि बाअज़ ईसाई जमाअतों का ख़याल है तो फिर ये सवाल पैदा होगा कि मर्यम के नाना कौन थे? और उन का सिलसिला नसब आल-ए-दाऊद से मिलता है या नहीं। और अगर मर्यम के बाप का नाम वाक़ई इमरान सही तस्लीम किया जाये तो उस के नसब नामे के मुताल्लिक़ इस क़द्र इख़्तिलाफ़ है कि ख़ुद ईसाईयों को अक्सर जगह तावील की ज़रूरत महसूस हुई और यक़ीन के साथ नहीं कहा जा सकता कि वो किस सिलसिले से आल-ए-दाऊद में शुमार हो सकता है। बाअज़ ने उसे मातान की औलाद में

शामिल किया है। इब्न इस्हाक़ उसे याशीम बिन अम्मोन की औलाद बताता है। इब्ने असाकिर ने ज़रियाफील के सिलसिले से आल-ए-मातान होना साबित किया है और अनाजील में बाहम सख़्त इख़्तिलाफ़ है। यहां तक कि बाअज़ जगह मर्यम का भी बग़ैर बाप के पैदा होना ज़ाहिर किया गया है। और बाअज़ बयानात से बजाए इमरान के मर्यम के बाप का नाम युवाक़ीम दर्ज है। बहर-ए-हाल मर्यम के वालिद का हाल चूँकि बिल्कुल तारीकी में है इसलिए इस पर एतिमाद करके हज़रत ईसा को मादरी सिलसिले से आल-ए-इब्राहिम में शामिल नहीं किया जा सकता। हालाँकि क़ुर्आन पाक से सराहतन उनका दर्याफ़्त इब्राहीम या आल-ए-दाऊद में होना साबित है। अलबत्ता अगर मर्यम के निसबती शौहर यूसुफ़ नज्जार को ईसा का बाप तस्लीम कर लिया जाये तो आसानी से हज़रत ईसा का आल-ए-दाऊद में होना साबित हो सकता है क्योंकि यूसुफ़ यक़ीनन आल-ए-मातान में से था और मातान का सिलसिला नसब दाऊद तक पहुंचता है। जैसा कि मत्ती की इन्जील से यही ज़ाहिर होता है कि हज़रत ईसा के बाप का नाम युसूफ था और वो बेटे थे याकूब के।

अगर ये तस्लीम कर लिया जाये कि ये हज़रत ईसा के बाप ना थे और वाक़ई बग़ैर बाप के पैदा हुए हैं तो फिर इन्जील व क़ुर्आन की ये सराहत कि वो आले-दाऊद में से होंगे बिल्कुल लगू हो जाती है। क्योंकि अव्वल तो मर्यम का सिलसिला नसब दाऊद तक पहुंचता नहीं और अगर वो पहुंचे भी तो साक़ित-उल-एतबार है। क्योंकि यहूद में हमेशा सिलसिला नसब बाप का क़ाबिल-ए-लिहाज़ तस्लीम किया जाता था और मादरी सिलसिला नसब को कोई ना पूछता था। यहां तक तो गुफ़्तगु सिलसिला नसब के लिहाज़ से हुई और इस का नतीजा ये निकला कि अगर ईसा की विलादत बग़ैर बाप के तस्लीम की जाये तो नस-ए-क़तई इस की मुआरिज़ा (झगड़ा) वाक़ेअ होती है।"

आपने इबारत माफ़ौक़ में उमूर ज़ेल पर निग़ाराना निगाह डाली है।

(अलिफ़) "अगर हज़रत ईसा की विलादत बग़ैर बाप के तस्लीम की जाये तो फिर इन्जील[2] व क़ुर्आन की ये सराहत कि वो आल-ए-दाऊद में से होंगे बिल्कुल लग़ू हो जाती है।"

(ब) "मर्यम को बिंत-ए-इमरान (इमरान की बेटी) और उख़्त हारून (हारून की बहन) कहने की रम्ज़।"

(ज) "इंजीलों में बाहम सख़्त इख़्तिलाफ़ है यहां तक कि बाअज़ जगह मर्यम का भी बग़ैर बाप के पैदा होना ज़ाहिर किया है।"

शक़ अव्वल के मुताल्लिक़ ये अर्ज़ है कि "इन्जील में ये सराहत कि वो आल-ए-दाऊद में से होंगे।" उस वक़्त "लग़ू" हो जाती है जब इन्जील में ये सराहत भी होती कि वो दीगर इन्सानों की तरह नुत्फ़ा से पैदा होंगे। हालाँकि सहफ़-ए-मुतहिहरा में ब-वज़ाहत इस का ज़िक्र है कि मसीह मौऊद-ए-आले दाऊद में से बग़ैर बाप के महज़ बतन-ए-मादर से होंगे। चूँकि उन तमाम पेशीनगोइयों का यहां दर्ज करना तवालत से ख़ाली नहीं है इसलिए हम सिर्फ एक पर इक्तिफ़ा करते हैं।

"ख़ुदावंद ने सच्चाई से दाऊद के लिए क़सम खाई जिससे वो ना फिरेगा कि मैं तेरे पेट के फल में से किसी को तेरे लिए तेरे तख़्त पर बिठाऊँगा।" (ज़बूर 132:11) इस पेशीनगोई से वो बातें साबित होती हैं अव्वल ये कि मर्यम सिद्दीक़ा दाऊद की नस्ल से हैं। क्योंकि मर्यम ही के बतन से हज़रत मसीह अलैहिस्सलाम पैदा हुए। दुवम ये कि मसीह अलैहिस्सलाम औरत से पैदा होंगे इसलिए दाऊद अलैहिस्सलाम को ख़ुदा ने कहा "तेरे पेट के फल से" अगर मसीह की पैदाइश बाप की वसातत से होने को होती तो "तेरी पीठ" यानी सल्ब से कहना लाज़िम था।

पस ज़ाहिर है कि इन्जील-ए-मुक़द्दस में हरगिज़ ये सराहत नहीं है कि मसीह की पैदाइश दाऊद के नुत्फे से होगी। और ना क़ुर्आन मजीद में ये सराहत मौजूद है जिसको आगे हम तफ़्सील के साथ बयान करेंगे। बल्कि दोनों पाक किताबों का इस पर इत्तिफ़ाक़ है कि हज़रत ईसा अलैहिस्सलाम ख़ुदा की क़ुद्रत से मोअजज़ाना तौर पर

---

[2] ग़ालिबन आपका मतलब अह्दे-अतीक़ से है। (सुलतान)

सिर्फ मर्यम सिद्दीक़ा के बतन से पैदा हुए। नीज़ ख़ुद हज़रत ईसा अलैहिस्सलाम ने दाऊद अलैहिस्सलाम के माद्दी इंतिसाब से बदीं अल्फ़ाज़ इन्कार फ़रमाया है कि "पस जब दाऊद उस को ख़ुदावंद कहता है तो वो उस का बेटा क्यूँ-कर ठहरा।" (मत्ती 22: 41 ता 45) गोया कि हज़रत ईसा ने एक लतीफ़ बल्कि लुत्फ़ पैराया में इस इशतिबाह (शक) को रफ़ा फ़रमाया कि मसीह महज़ और महज़ इब्ने दाऊद होंगे। ये ना सिर्फ इन्जील ही की सराहत है बल्कि क़ुर्आन मजीद ने भी इस सराहत का इआदा किया है।

लफ़्ज़ आल पर बहस

लफ़्ज़ "आल" से ये नतीजा अख़ज़ करना कि मसीह इब्राहिम या दाऊद के नुत्फे इतत्कला थे सरासर ग़लत और बिना-ए-फ़ासिद-अलल-फासिद है जिस आयत से आपने ये इस्तिदलाल किया है ख़ुद उसी आयत में इस की तर्दीद मौजूद है। जिनकी तफ़्सील ये है कि आयत मस्तिदला में हज़रत अय्यूब अलैहिस्सलाम और हज़रत इल्यास अलैहिस्सलाम को भी आले इब्राहिम और दाऊद कहा है जो हक़ीक़तन उनकी ज़ुर्रियत में शामिल नहीं हैं और ना उनके नुत्फ़ा मुंतक़िला हैं। नीज़ आप ख़ुद ही फ़र्मा रहे हैं कि "कलाम मजीद में आल, उख़्त, इब्न, या बिंत वग़ैरह का इस्तिमाल निहायत वसीअ मअनी में हुआ है।" अगर ये दुरुस्त है तो फिर इस वुसअत को तंग बनाना कहाँ का इन्साफ़ है।

यहूदीयों में सिलसिला नसब

आप का यह फ़रमाना कि यहूद में हमेशा सिलसिला नसब बाप का क़ाबिल लिहाज़ तस्लीम किया जाता था और मादरी (माँ कि तरफ से) सिलसिला नसब को कोई ना पूछता था सरासर ग़लत और सर सय्यद मर्हूम व मौलवी मुम्ताज़ अली मर्हूम की कोराना तक़्लीद (पैरवी) है। काश कि ख़ुद बदौलत ही तक्लीफ़ उठा कर अल-किताब का मुतालआ फ़र्माते उस वक़्त मालूम हो जाता कि सर सय्यद मर्हूम ने आपको किस तरह मुग़ालते में डाल दिया है। ये सच्च है कि "इस सूरत मादरी सिलसिला नसब को कोई ना पूछता था" मगर जब एक यहूदी औरत एक ग़ैर-यहूदी मर्द के साथ अक़्द (निकाह) करती। लेकिन ये कहना कि अगर वो दोनों यहूदी भी होते तब भी "मादरी सिलसिला नसब को कोई ना पूछता था।" और वो हमेशा ऐसा करते थे बिल्कुल लग़ू और पोच है। क्योंकि बाइबल मुक़द्दस में मुतअद्दिद मुक़ामात

ऐसे हैं जहां औरतों के नाम नसब नामों में मुन्दरज हैं। जिनमें से दो एक मुक़ाम हद्या नाज़रीन करते हैं।

(1) और उनकी बहनें ज़रोयाह और अबीजेल थीं। और अबी शैय और यूआब और इसाहेल ये तीनों ज़ुरूयाह के बेटे हैं। और अबीजेल से अमासा पैदा और अमासा का बाप यत्रा इस्माईली था। (1 तवारीख़ 2:16 ता 17)

(2) "तक़ूअ के बाप अशूर की दो जोरुवां थीं हेलाह और नाराह और नाराह उस के लिए उख़ूसाम और हज़र और तीमनी और हख़सतरी जनी। ये बनी नाराह हैं। और बनी हैलाह ज़र्रत और यज़वा और इतनान। (1 तवारीख़ 4:5 ता 7)

बफ़र्ज़ मुहाल अगर मुदीर साहिबे **"निगार"** का "हमेशा" सही और दुरुस्त भी होता उस वक़्त भी मद्दज़ इसलिए कि मर्यम सिद्दीक़ा औरत थीं और यहूदियत या आले इब्राहीमी से ख़ारिज नहीं हो सकती थीं तावक़्त ये कि ये साबित ना किया जाये कि वो यहूदी नहीं बल्कि एक अजनबी औरत थीं क्योंकि औरत के नाम का नसब नामा ना होना इस की दलील नहीं हो सकती कि वो यहूदी या इब्राहीमी नस्ल की नहीं है। तावक़्त ये कि एक अलैहदा दलील इस पर क़ायम ना की जाये।

क़ुर्आन शरीफ़ से मर्यम सिद्दीक़ा के यहूदी होने का सबूत

यहां तक तो हमने इस से बद्दस की कि हज़रत ईसा अलैहिस्सलाम आले इब्राहिम या आले दाऊद होने का ये मतलब है कि वो माँ की जानिब से आले इब्राहिम या आले दाऊद होंगे। और सहफ़ मुतद्दहरा के शवाहिद से हम ने ये साबित किया कि सिलसिला मादरी यहूदी नुक़्ता निगाह में एक अम्र मुस्तनद है। अब अगर हम क़ुर्आन शरीफ़ से भी ये साबित कर सकें कि मर्यम सिद्दीक़ा इब्राहीमी नस्ल में से थीं तो फिर मुदीर साहिबे निगार का ये एतराज़ कि "अगर ईसा की विलादत बग़ैर बाप के तस्लीम की जाये तो नस-ए-क़तई इस की मुआरिज़ वाक़ेअ होती है" "बेवुक़अत और बातिल ठहरेगा।" और नस-ए-क़तई इस की मुआरिज़ नहीं बल्कि मुआज़िद व मवेद वाक़ेअ होगी।

अगरचे क़ुर्आन मजीद मर्यम सिद्दीक़ा का कोई तूल व तवील नसब नामा पेश तो नहीं करता लेकिन चंद ऐसे वाक़ियात बयान करता है जिनसे लारेय्ब (बगैर शक)

ये साबित होता है कि मर्यम सिद्दीक़ा ख़ालिस इब्राहीमी नसब यहूदी हसब थीं। मसलन ये कि :-

(1) उनकी माँ का उनको हैकल की ख़िदमत के लिए नज़्र करना। (आले-इमरान रुकूअ 4)

(2) हज़रत ज़करीया का उनका कफ़ील हो जाना। (आले-इमरान रुकूअ 4)

(3) मर्यम का मसीह को अपनी क़ौम (यहूदीयों) के पास लाना। (सूरह मर्यम रुकूअ 2)

(4) मर्यम का उख़्त हारून कहलाना वग़ैरह ज़ालिक। (सूरह मर्यम रुकूअ 2)

ये ऐसे वाक़ियात हैं जिनसे साफ़ ज़ाहिर होताहै कि मर्यम सिद्दीक़ा इब्राहीमी नसब थीं। क्योंकि ग़ैर का हैकल की ख़िदमत करना तो दर-किनार उस के पास तक नहीं फटक सकता था। (आमाल 21:27 ता 28) और हज़रत ज़करीया का मर्यम सिद्दीक़ा को अपनी किफ़ालत में ले लेना मर्यम के यहूदी होने की एक ऐसी ज़बरदस्त दलील है जिससे कोई शख़्स तावक़्त ये कि परागंदा व ख़्याल ना हो इन्कार नहीं कर सकता। क्योंकि हज़रत ज़करीया मर्यम के ख़ालू थे। यानी हज़रत मर्यम की माँ और हज़रत इलेशबा जो हज़रत ज़करीयाह की बीवी थीं दोनों बहनें थीं। (इब्ने खल्दून)[3] और हज़रत इलेशबा यहूदा के फ़िर्क़े में से थीं। लिहाज़ा मर्यम की माँ भी यहूदा के फ़िर्क़े में से और इब्राहीमी नस्ल थीं। यही वजह है कि हज़रत ज़करीया ने मर्यम सिद्दीक़ा को अपनी सर-परस्ती में ले लिया। यहूदीयों को मर्यम की क़ौम कहना और मर्यम का उख़्त हारून कहलाना मज़ीद सबूत है इस बात का कि मर्यम सिद्दीक़ा फ़िल-हक़ीक़त यहूदी हसब थीं।

मर्यम को बिंत-ए-इमरान और उख़्त-ए-हारून कहने की रम्ज़

3 "قال الطبری۔ وکانت حنۃ مریم الانجیل فنذرت اللہ ان حملت لتجلعن ولد بھا جباًبیت المقدس علی خدمت علی عاداتھم فی نذر مثلہ فلما حملت ووضعتھا الفھقافی خرقتھا وجائت بھاالی المسجد فدفنطاالی عبادہ وھی ابنہ نے اسامھم فتناز عوانی کفالتھا۔ وارادذکریاان یستبد بھالان زوجہ ایشاع (الیصبات) خالتھا۔"

(इब्ने ख़ुल्लिदुन व ब-रिवायत तिबरी) सुलतान

शक़ सानी में आप तहरीर फ़र्माते हैं कि :-

> कलाम मजीद में एक जगह मर्यम को बिंत-ए-इमरान (इमरान की बेटी) कह कर पुकारा गया है और दूसरी जगह उख़्त हारून (हारून की बहन) के लक़ब से याद किया गया है। गोया इस से ये बात साबित हुई है कि मर्यम के बाप का नाम इमरान था और हारून उनके भाई थे। इस पर ईसाई उलमा ने एतराज़ भी किया है कि हारून के ज़माने से मर्यम को क्या निस्बत हो सकती है लेकिन वो इस रम्ज़ को नहीं समझे कि मर्यम को हारून की बहन कहना किसी हक़ीक़ी रिश्ते का इज़्हार नहीं है बल्कि सिर्फ उस मुमासिलत की बिना पर है जिस तरह हारून हिफ़ाज़त व खिदमत हैकल के लिए मामूर थे। इसी तरह मर्यम की भी ज़िंदगी शुरू हुई।.... अब रह गया उनको इमरान की बेटी कहना सो यक़ीनन ये भी इसी लिहाज़ से कहा गया है जिस तरह उख़्त हारून के अलफ़ाज़ को इस्तिमाल किया गया है। कलाम मजीद में "आल, उख़्त, इब्न या बिंत" वग़ैरह का इस्तिमाल बहुत वसीअ मअनी में हुआ है और इन अल्फ़ाज़ से वो क़रीब रिश्ता मुराद नहीं किया गया है जो उनके मअनी से मुतबावर होता है इसलिए मर्यम को बिंत इमरान कहना ये मअनी नहीं रखता कि वो वाक़ई इमरान की बेटी थीं।"

मुहतरमी ! ईसाई इस रम्ज़ को समझे या नहीं समझे यहां इस से बहस नहीं है। लेकिन हैरत तो ये है ख़ुद बदौलत ने इस रम्ज़ को नहीं समझा और क़तअन नहीं समझा। आपका ये फ़रमाना कि मर्यम को हारून की बहन कहना किसी हक़ीक़ी रिश्ते का इज़्हार नहीं है बल्कि सिर्फ इस मुमासिलत की बिना पर है कि जिस तरह हारून हिफ़ाज़त व खिदमत हैकल के लिए मामूर थे इसी तरह मर्यम की भी ज़िंदगी शुरू हुई ग़लत बल्कि इग़लात है। तौरेत मुक़द्दस की रु से हारून अलैहिस्सलाम की ख़िदमत में एक औरत की ख़िदमत में बाद-उल-मशरक़ीन से भी ज़्यादा बाद था। बल्कि कोई औरत इन ख़िदमात में से एक को भी बजा नहीं ला सकती थी जिनके बजा लाने के लिए हारून मामूर थे। यही सबब है कि क़ुर्आन मजीद में मर्यम सिद्दीक़ा की वालिदा मुहतरमा कह रही हैं कि (सूरह आले-इमरान आयत 36)

وَلَيْسَ الذَّكَرُ كَالْأُنْثَىٰ

जिसकी तफ़्सीर में आपकी मुक़तिदा सर सय्यद अलैहि रहमा लिखते हैं कि "बेटी इस तरह पर मबाद की ख़िदमतगुज़ारी पर मोमूर नहीं हो सकती थी। इसलिए जब लड़की पैदा हुई तो हज़रत मर्यम की माँ ने अफ़्सोस किया और कहा कि **وَلَيْسَ الذَّكَرُ كَالْأُنْثَىٰ**

पस साफ़ ज़ाहिर है कि मर्यम और हारून में "मुमासिलत" नहीं बल्कि मुख़ालिफ़त है जिन्सियत के लिहाज़ से भी और ख़िदमत के लिहाज़ से भी। इसलिए मैंने अर्ज़ किया था कि ख़ुद बदौलत ने इस रम्ज़ को नहीं समझा।

इसी तरह आपका ये फ़रमाना भी सरासर ग़लत है कि मर्यम को बिंत इमरान कहना ये मअनी नहीं रखता है कि वो वाक़ई इमरान की बेटी थीं मैं कहता हूँ कि वो वाक़ई इमरान की बेटी थीं क्योंकि क़ुर्आन मजीद मर्यम को सिर्फ बिंत इमरान ही ज़ाहिर नहीं करता बल्कि उनकी वालिदा मुहतरमा को इमरान की[4] बीवी भी बतलाता है जिससे साफ़ साबित होता है कि मर्यम सिद्दीक़ा हक़ीक़तन और सलबन इमरान की बेटी थीं। चुनान्चे आपके साहिब-ए-माख़ज़ सर सय्यद मर्हूम भी इस आयत की तफ़्सीर में यही लिखते हैं कि ये नाम हज़रत मर्यम के बाप का है फिर ना मालूम किस बिना पर आप लिखते हैं कि वो वाक़ई इमरान की बेटी नहीं थीं।

इंजीलों में बाहम इख़्तिलाफ़

शक़-ए-सालिस में आप इर्शाद फ़र्माते हैं कि :-

---

4 إِذْ قَالَتِ امْرَأَةُ عِمْرَانَ رَبِّ إِنِّي نَذَرْتُ لَكَ مَا فِي بَطْنِي مُحَرَّرًا فَتَقَبَّلْ مِنِّي إِنَّكَ أَنتَ السَّمِيعُ الْعَلِيمُ فَلَمَّا وَضَعَتْهَا قَالَتْ رَبِّ إِنِّي وَضَعْتُهَا أُنثَىٰ وَاللَّهُ أَعْلَمُ بِمَا وَضَعَتْ وَلَيْسَ الذَّكَرُ كَالْأُنثَىٰ وَإِنِّي سَمَّيْتُهَا مَرْيَمَ وَإِنِّي أُعِيذُهَا بِكَ وَذُرِّيَّتَهَا مِنَ الشَّيْطَانِ الرَّجِيمِ

तर्जुमा : जिस वक़्त इमरान की बीवी ने कहा कि ऐ परवरदिगार जो मेरे पेट में है मैंने उस को ख़ालिसन तेरी नज़्र कर दिया फिर मेरी तरफ़ से क़बूल कर बेशक तू ही सुनने वाला है जानने वाला फिर जब बेटी पैदा हुई तो उस ने कहा ऐ परवरदिगार मैंने तो बेटी जनी और ख़ुदा ख़ूब जानता है जो उसने जना और बेटा बेटी की मानिंद नहीं होता और हाँ मैंने इस का नाम मर्यम रखा और बेशक मैं इस को और इस की औलाद को तेरी पनाह में देती हूँ मर्दूद शैतान से। (सुलतान)

> "इंजीलों में बाहम सख़्त इख़्तिलाफ़ है यहां तक कि बाअज़ जगह मर्यम का भी बग़ैर बाप के पैदा होना ज़ाहिर किया गया है। और बाअज़ बयानात से बजाए इमरान के मर्यम के बाप का नाम युवाकीम दर्ज है।"

मुदीर साहिब निगार की क़ुर्आन दानी तो आप देख चुके अब आप ज़रा उनकी इन्जील दानी की महारत भी मुलाहिज़ा फ़रमाएं। आपके इस मज़्मून की बिना पर मैं तो क़सम खा कर कह सकता हूँ कि आपने इन्जील देखी ही नहीं। काश कि ख़ुदा आपको ये तौफ़ीक़ देता कि कम अज़ कम एक बार ही आप उस को देख लेते। क़िब्ला मैं आपसे बातहद्दी (चैलेंज के साथ) मुतालिबा करता हूँ कि कुछ नहीं तो एक जुम्ला या एक लफ़्ज़ ही आप "इंजीलों" में से इक्तबासन पेश करें जिससे अगर बवज़ाहत नहीं तो बिल-इशारा या बिल-किनाया समझा जा सके कि मर्यम सिद्दीक़ा "बग़ैर बाप" के पैदा हुई थीं। - تاسیہ روی شودہر کہ دردغش باشد

आपका ये फ़रमाना भी कि "बाअज़ बयानात से बजाए इमरान के मर्यम बाप का नाम युवाकीम दर्ज है।" माफ़ौक़ किज़्ब और बोहतान है। इंजीलों में ना तो मर्यम सिद्दीक़ा के वालिद का नाम इमरान लिखा है और ना युवाकीम लिखा है। इन्जील में जो नसब नामा दर्ज है बाअज़ मुफ़स्सिरीन का ये ख़याल है वो मर्यम का नसब नामा है ! अगर ये ख़याल दुरुस्त भी हो तब भी इंजीलों में बाहम सख़्त इख़्तिलाफ़ नहीं बल्कि क़ुर्आन मजीद और इन्जीलों में इख़्तिलाफ़ हो सकता है। क्योंकि क़ुर्आन मजीद में मर्यम सिद्दीक़ा के बाप का नाम इमरान लिखा हुआ है। और लूक़ा की इन्जील में ऐली लिखा हुआ है। लेकिन दर-हक़ीक़त क़ुर्आन मजीद और इन्जील मुक़द्दस में भी हक़ीक़ी इख़्तिलाफ़ नहीं है। क्योंकि मुम्किन है कि एक शख़्स के दो नाम हों। सहफ़-ए-मुतहहरा में बीसियों ऐसी मिसालें मौजूद हैं कि एक शख़्स के कई-कई नाम होते थे। मसलन हज़रत इब्राहिम अलैहि सलातो वस्सलाम के दो नाम थे। अब्राम, अबराहाम ख़ुद हज़रत ईसा अलैहि सलातो वस्सलाम के चार मशहूर नाम थे। येसू, (ईसा) मसीह, इम्मानुएल व इब्ने-आदम, मुक़द्दस पतरस के दो नाम थे शमऊन व पत्रस वग़ैरह। सर सय्यद मर्हूम भी यही लिखते हैं कि ईसाई मज़्हब की किताबों से ठीक तौर पर ये मालूम नहीं होता कि हज़रत मर्यम के बाप का क्या नाम था। बाज़ ये गुमान करते हैं कि हैली या ऐली उनके बाप का नाम था। अगर वो सही भी हो तो मुम्किन है कि एक शख़्स के दो नाम हों (इमरान 35)

मसअला विलादत-ए-मसीह व अयात व इन्जील व क़ुर्आन

आगे चल कर आप फ़र्माते हैं कि :-

> “अब दूसरी सूरत बह्स की ये है कि नफ़्स-ए-मसअला विदलात मसीह के मुताल्लिक़ इन्जील व क़ुर्आन की आयात पर ग़ौर किया जाये। इंजीलें चार हैं :-
>
> (1) मत्ती की इन्जील जो हज़रत ईसा के दो साल बाद लिखी गई और तमाम इंजीलों में बहुत क़दीम है।
> (2) लूक़ा की इन्जील जो 30, 31 साल बाद तहरीर में आई।
> (3) यूहन्ना की इन्जील जो 63, 64 साल बाद लिखी गई।
> (4) मर्क़ुस की इन्जील जो इस के बहुत बाद की है।
>
> इन चारों इंजीलों के देखने से मालूम होता है कि यूसुफ़ मर्यम के शौहर और ईसा के बाप थे मुतअद्दिद मुक़ामात पर इसी निस्बत का इज़्हार किया गया है। (देखो इन्जील मत्ती बाब 1 दर्स 16, लूक़ा की इन्जील बाब 2 दर्स 33, यूहन्ना की इन्जील बाब 6 दर्स 42)”

दयानतदार नक़्क़ाल

इख़्तिलाफ़ आरा (राय) की बिना पर हम किसी शख़्स की ख़ूबीयों को नज़र-अंदाज नहीं कर सकते हैं। अगर हम ऐसा करें तो यक़ीनन अख़्लाक़ी मुजरिम होंगे “निगार” में जहां बहुत सी खूबियां हैं वहां एक ख़ूबी ये भी है कि आप किसी मज़्मून की नक़्ल उतारने में निहायत दियानतदारी से काम लेते हैं। हत्ता कि मक्खी पर मक्खी मारने के गोया आप मुजस्सम मिस्दाक़ बनते हैं। मज़्मून सही हो या ग़लत उनकी बला से। सिर्फ नक़्ल करने से उनका मतलब होता है चुनान्चे फ़िक़्रह माफ़ौक़ इस का शाहिद है। फ़िक़्रह माफ़ौक़ को आपने सर सय्यद अलैहि रहमा की **“तफ़्सीर क़ुर्आन”** के (सूरह इमरान के सफ़ा 21) से बलफ़्ज़ नक़्ल किया है। और इस की सेहत

और अदम सेहत का क़तअन लिहाज़ नहीं किया। हालाँकि सर सय्यद मर्हूम का ये ख़याल कि "मर्क़ुस की इन्जील इस के बहुत बाद की है।" बिल्कुल सेहत से ख़ाली है। हालाँकि मर्क़ुस की इन्जील तमाम-तर इंजीलों में क़दीम तर है। (डमलियु की एक जिल्द तफ़्सीर बाइबल)

(The One Volume Bible Commentary Edited By J.R. Dummelow. M.A)

ख़ैर ! ये तो एक तारीख़ी मसअला था जिसकी तहक़ीक़ "निगार" की नाज़ुक तबीयत बर्दाश्त नहीं कर सकती थी अब आपकी इन्जील फ़हमी मुलाहिज़ा हो। आप (दर-हक़ीक़त सर सय्यद मर्हूम) लिखते हैं कि :-

मुदीर साहब निगार की इन्जील फ़हमी

> "इन चारों इंजीलों को देखने से मालूम होता है कि यूसुफ़ मर्यम के शौहर और ईसा के बाप थे। मुतअद्दिद मुक़ामात पर इसी निस्बत का इज़्हार किया गया है। (देखो इन्जील मत्ती 1:16, लूक़ा की इन्जील 2:33, यूहन्ना की इन्जील 6:42)"

इस में कोई शक नहीं है कि ना सिर्फ इन्हीं मुक़ामाते बाला में बल्कि और मुक़ामात में भी यूसुफ़ को मर्यम का शौहर और ईसा का बाप कहा गया है। लेकिन जब इन मुक़ामात को अनाजील के दीगर मुक़ामात के साथ मुक़ाबला करके देखा जाये तो साफ़ मालूम होता है कि शौहर और बाप के वो माने नहीं हैं जो मुदीर साहब निगार और सर सय्यद मर्हूम समझते हैं। हम ज़ेल में उन आयात को लिखते हैं जिनसे अल्फ़ाज़ बाला पर रोशनी पड़ती है :-

"अब येसू मसीह की पैदाइश इस तरह हुई कि जब उस की माँ मर्यम की मंगनी यूसुफ़ के साथ हो गई तो उनके इकट्ठे होने से पहले वो रूह-उल-क़ुद्स की क़ुद्रत से हामिला पाई गई। पस उस के शौहर यूसुफ़ ने जो रास्तबाज़ था उसे बदनाम करना नहीं चाहता था चुपके से उस को छोड़ देने का इरादा किया। वो इन बातों को सोच ही रहा था कि ख़ुदावंद के फ़रिश्ते ने उसे ख़्वाब में दिखाई देकर कहा, ऐ यूसुफ़ इब्ने दाऊद, अपनी बीवी मर्यम को अपने हाँ ले आने से ना डर क्योंकि जो उस के

पेट में है वो रूह-उल-क़ुद्स की क़ुद्रत से है।" (मत्ती 1:18 ता 21 नीज़ मुलाहिज़ा हो लूक़ा 1:26 ता 28)

आयात-ए-माफ़ौक़ में चंद निहायत गौरतलब उमूर का बयान है। मसलन :-

(1) मर्यम सिद्दीक़ा की मंगनी यूसुफ़ के साथ।

(2) मंगनी की हालत में मर्यम सिद्दीक़ा का हामिला पाया जाना।

(3) यूसुफ़ को जब मालूम हुआ कि मर्यम सिद्दीक़ा हामिला हैं तो उनको छोड़ देने का इरादा करना।

(4) जब मर्यम सिद्दीक़ा हामिला पाई गईं तो उस वक़्त तक वो यूसुफ़ के घर में नहीं रहती थीं।

(5) फ़रिश्ते का यूसुफ़ को ख़्वाब में ये कहना कि ये हमल इन्सानी नुत्फे से नहीं बल्कि रूह-उल-क़ुद्स की क़ुद्रत से है।

अम्र अव्वल पर हम दोनों का इत्तिफ़ाक़ है इसलिए इस पर मज़ीद बहस करना फ़ुज़ूल है। अलबत्ता अम्र दोम क़ाबिल-ए-ग़ौर है। सर सय्यद मर्हूम अपनी "तफ़्सीर-उल-क़ुर्आन" में लिखते हैं कि :-

> "मसीह की विलादत मंगनी की हालत में यूसुफ़ के नुत्फे से हुई थी। और दलील ये देते हैं कि यहूदीयों में मंगनी और निकाह में कोई फ़र्क़ नहीं होता था।"

(तफ़्सीर-उल-क़ुर्आन, इमरान आयत 42)

ये सरासर ग़लत और बिल्कुल लग़ू है। मुझको बेहद ताज्जुब है कि सर सय्यद जैसे मुहक़्क़िक़ के क़लम से किस तरह ये लग़्ज़िश (भूल चूक, ख़ता) वाक़ेअ हुई और हमारे करम फ़र्मा आगे चल कर लिखते हैं कि :-

> "मर्यम का ताल्लुक़ इज़्दिवाज़ तो यक़ीनन इस से साबित होता है कि उनकी और औलादें भी थीं फिर जिस तरह और

औलादें ताल्लुक़ इज़्दिवाज़ के बाद हुईं। उसी तरह हज़रत ईसा की विलादत हुई होगी।"

किसी दो शख्सों में एक बात पर इख़्तिलाफ़ पाया जाना ये मअनी रखता है कि दोनों में से एक हक़-बजानिब होगा। यानी या तो सर सय्यद हक़-बजानिब होंगे जो मसीह की विलादत को असना-ए-मंगनी में तस्लीम करते हैं या हमारे करम फ़र्मा हक़ बजानिब होंगे जो मसीह की विलादत को निकाह के बाद तस्लीम करते हैं। लेकिन इन्जील-ए-मुक़द्दस मुक़तदी और मुक़्तदाद दोनो की तक़्ज़ीब करती है। चुनान्चे अम्र सोम से ज़ाहिर है, अगर दर-हक़ीक़त मसीह की विलादत यूसुफ़ के नुत्फे से मंगनी की हालत में या उस के बाद निकाह की हालत में होती तो यूसुफ़ का चुपके से मर्यम को छोड़ देने का इरादा करना ना सिर्फ बेमाअनी बल्कि शरारत होती। क्योंकि बक़ौल सर सय्यद मर्हूम अगर यहूदीयों के दस्तूर के मुवाफ़िक़ मंगनी और निकाह में कोई फ़र्क़ नहीं था तो मर्यम सिद्दीक़ा के छोड़ देने की कोई वजह ना थी और यूसुफ़ अलल-ऐलान (बाआवाज़े बुलंद) कह सकता था कि ये मेरा नुत्फ़ा है। और बक़ौल हमारे करम फ़र्मा के अगर ताल्लुक़ इज़्दिवाज़ के बाद मसीह की विलादत हुई होती तब तो मुतलक़ उनको मर्यम सिद्दीक़ा के छोड़ देने का ख़याल तक ना करना चाहिए था। वो कौन शख़्स है कि अपनी मन्कूहा बीवी को जो उसी के नुत्फे से हामिला हुई हो छोड़ देने का इरादा करे तावक़्त ये कि वो बदज़ात और शरीर-उल-नफ़्स साबित ना हो। क्या हमारे करम फ़रमाया साबित कर सकेंगे? पस यूसुफ़ का मर्यम सिद्दीक़ा के छोड़ देने का इरादा करना इस बात की काफ़ी और शाफ़ी दलील है कि मसीह की विलादत में यूसुफ़ का कोई ताल्लुक़ नहीं था बल्कि मर्यम सिद्दीक़ा उस वक़्त तक यूसुफ़ के घर में भी नहीं आई थीं जैसा कि अम्र चहारुम से साबित है। वर्ना फ़रिश्ते का ये कहना कि अपनी बीवी मर्यम को अपने हाँ ले आने से ना डर मुहमल (बेमाअ्नी, बेमतलब) ठहरता था।

अम्र पंजुम तो साफ़ तौर पर और बवज़ाहत बतला रहा है कि मर्यम सिद्दीक़ा का ये हमल ना तो यूसुफ़ से था और ना किसी और बशर से था बल्कि महज़ रूह-उल-क़ुद्स की क़ुद्रत से था। पस जहां कहीं अनाजील में यूसुफ़ और मसीह के ताल्लुक़ को बाप या बेटे या इसी क़िस्म के दीगर अल्फ़ाज़ से ज़ाहिर किया गया है वो सब मजाज़ पर महमूल हैं ना कि हक़ीक़त पर। अब आप समझ गए?

क़ुर्आन मजीद से विलादत-ए-मसीह पर बहस

आगे चल आप तहरीर फ़र्माते हैं कि :-

"कलाम मजीद की आयात में किसी जगह इस का इज़्हार नहीं किया गया कि आपकी विलादत बग़ैर बाप के हुई है लेकिन बाअज़ अल्फ़ाज़ ऐसे हैं जिनसे ये मफ़्हूम अख़ज़ किया जाता है इसलिए आईए अब उन अल्फ़ाज़ पर ग़ौर करें कि असली बहस यही है और इसी पर फ़ैसले का इन्हिसार है।"

"अब आप सूरह आले-इमरान की उन आयतों को देखिए जिन्हें हम दर्ज कर चुके हैं। इनमें सबसे पहला वो लफ़्ज़ जिसको विलादत मसीह से मुताल्लिक़ समझा जाता है "कलमा" का लफ़्ज़ है। यानी मलाइका (फरिश्तों) का मर्यम से ये कहना कि हम तुझे ख़ुशख़बरी देते हैं ख़ुदा की तरफ़ से एक "कलमे" की जिसका नाम इब्ने मर्यम होगा इस बात को ज़ाहिर करता है कि मसीह वाक़ई ख़ुदा के सिर्फ एक कलमा थे और यही कलाम मसीह की विलादत का बाइस हुआ। लेकिन किसी शख़्स का ये ख़याल करना ना फ़हमी की दलील है क्योंकि अव्वल तो इस के ये मअनी हो ही नहीं सकते कि जिस कलमे की ख़ुशख़बरी दी जाती है उस का नाम मसीह होगा। क्योंकि लफ़्ज़ कलमा मुअन्नस है और अस्मा में ज़मीर मुज़क्कर की है अगर वो मक़्सूद होता तो इस्महा होना चाहिए था। दूसरे ये कि अगर मसीह को कलमा इलाही समझ लिया जाये तो भी इस से उनकी विलादत बे बाप के कैसे साबित हो सकती है?"

कलमे का लफ़्ज़ कलाम मजीद में अक्सर जगह आया है लेकिन किसी जगह इस के माअनी लफ़्ज़ या कलाम के नहीं लिए गए। अक्सर जगह तो इस से मुराद पेशीनगोई ली गई है लेकिन कहीं कहीं अहकामे रब्बानी किताब इलाही और मख़्लूक़ात मुराद हैं मसलन (सूरह आले-इमरान आयत 39)

اَنَّ اللّٰهَ يُبَشِّرُكَ بِيَحْيٰى مُصَدِّقًا بِكَلِمَةٍ مِّنَ اللّٰهِ

कि यहां कलमे से मुराद पेशीनगोई है। (सूरह यूनुस आयत 64)

لَا تَبۡدِيۡلَ لِكَلِمٰتِ اللّٰهِ

कि इस जगह भी पेशीनगोईयां या मुक़ादीर इलाहिया मुराद हैं। (सूरह अनआम आयत 34)

وَلَقَدۡ كُذِّبَتۡ رُسُلٌ مِّنۡ قَبۡلِكَ فَصَبَرُوۡا عَلٰى مَا كُذِّبُوۡا وَاُوۡذُوۡا حَتّٰٓى اَتٰٮهُمۡ نَصۡرُنَا‌ ۚ وَلَا مُبَدِّلَ لِكَلِمٰتِ اللّٰهِ‌

यहां भी कलमात से पेशीनगोईयां मुराद हैं। (सूरह अल-कहफ़ आयत 109)

قُلْ لَّوْ كَانَ الْبَحْرُ مِدَادًا لِّكَلِمٰتِ رَبِّيْ لَنَفِدَ الْبَحْرُ قَبْلَ اَنْ تَنْفَدَ كَلِمٰتُ رَبِّيْ وَلَوْ جِئْنَا بِمِثْلِهٖ مَدَدًا

यहां कलमात से मख़्लूक़ात मुराद हैं।

फिर जब क़ुर्आन पाक में किसी जगह कलमे के मअनी लफ़्ज़ के नहीं आए तो आल-ए-इमरान की इस आयत में क्यूँ-कर वो मअनी मुराद हो सकते हैं ज़ाहिर है कि यहां भी कलमे के मअनी पेशीनगोई के हैं। जैसा कि इमाम राज़ी ने भी ज़ाहिर किया है। या सिर्फ मख़्लूक़ के और इस लिहाज़ से आयत के मअनी ये होंगे कि "फ़रिश्तों ने मर्यम से कहा अल्लाह तुझे एक बेटे की पेशगोई की ख़ुशख़बरी देता है जिस का नाम मसीह ईसा इब्ने मर्यम होगा।" लफ़्ज़ (ولد يبشرك) के बाद मख़ज़ूफ़ से जैसा कि (सूरह हिज्र की आयत 55) में قالو البشرك के बाद लफ़्ज़ ولد महज़ूफ़ (हज़फ़ किया गया, अलग किया गया) है और इस तरह महज़ूफ़ात पर करने के बाद आयत यूं होगी :-

"यानी अल्लाह " اِبنِ اللہ یبشرك بكلمته منه (بولد) اسمه مسيح الخ ـ ख़ुशख़बरी देता है तुझे अपनी तरफ़ से एक पेशगोई की (और

> वो पेशीनगोई एक लड़के की है) जिसका नाम मसीह ईसा बिन मर्यम होगा।" लफ़्ज़ वलद (ولد) को हज़फ़ करके इस का मफ़्हूम मुराद लेना बिल्कुल इसी तरह है जिस तरह हम लोग किनायतन किसी को हामिला करने के लिए कहते हैं कि फ़ुलां औरत उम्मीद से है या विलादत के मुताल्लिक़ कहा करते हैं कि ख़ुदा जल्द कोई ख़ुशख़बरी सुनाए बिल्कुल यही अंदाज़ बयान इस जगह कलाम मजीद का है। बहर-ए-हाल इस आयत में लफ़्ज़ कलमा से कोई मफ़्हूम ऐसा अख़ज़ नहीं हो सकता जिससे ईसा का बिन बाप के पैदा होना साबित होता हो। सूरह मर्यम में बजाए लफ़्ज़ कलमे के सराहतन अल्फ़ाज़ غلاماً کیا (पाकीज़ा लड़का) इस्तिमाल किए गए हैं और ये मज़ीद सबूत इस अम्र का है कि यहां भी लफ़्ज़ कलमे का मफ़्हूम वही है ना कि काम ख़ुदावंदी।"

इबारत बाला में आपके ख़यालात व क़रार ज़ेल मुन्दरज हैं :-

(अलिफ़) "कलाम मजीद की आयात में किसी जगह इस का इज़्हार नहीं किया गया कि आप मसीह की विलादत बग़ैर बाप के हुई है।"

(ब) "लफ़्ज़ कलमा मुअन्नस है और अस्मा में ज़मीर मुज़क्कर की है अगर वो मक़्सूद होता तो इस्महा होना चाहिए था।"

(ज) "कलाम मजीद में किसी जगह कलमे के मअनी लफ़्ज़ या कलाम के नहीं लिए गए।"

(द) "अक्सर जगह कलमे से मुराद पेशगोई ली गई है लेकिन कहीं-कहीं अहकाम रब्बानी, किताब इलाही और मख़्लूक़ात मुराद हैं।"

(ह) "और इस तरह महज़ूफ़ात पर करने के बाद आयत यूं होगी।"

क़ुर्आन मजीद में मसीह की विलादत बग़ैर बाप के बवज़ाहत मौजूद है

शक़ अलिफ़ के मुताल्लिक़ ये अर्ज़ है कि जो शख़्स एक सरसरी निगाह से ही हमारे इस रिसाले को एक बार देखेगा वो यक़ीनन तस्लीम करेगा कि क़ुर्आन मजीद में मसीह की विलादत बग़ैर बाप के बवज़ाहत मौजूद है और जम्हूर मुसलमान का इस पर ना सिर्फ इत्तिफ़ाक़ है बल्कि ईमान है। आगे चल कर जहां क़ुर्आन मजीद की आयात पर बहस करेंगे वहां हम इस को साबित भी करेंगे।

लफ़्ज़ कलमा और मुदीर साहब निगार की अरबी दानी

आपके इस मज़्मून की ब-तन्क़ीह (किसी चीज़ को ज़वाइद और उयूब से पाक करना) करते करते जब मैं फ़िक़्रह माफ़ौक़ तक पहुंच गया तो मेरी हैरत की कोई इंतिहा ना रही। क्योंकि अब तक तो सर सय्यद मर्हूम की तफ़्सीर की नक़्ल हो रही थी उन्ही के ख़यालात का मुंतिज (नतीजा) हो रहा था, लेकिन यहां से रंग कुछ बदला हुआ मालूम होता है। क्योंकि आपके शक़ "ब, ह" तक की बहस ना तो सर सय्यद मर्हूम की तफ़्सीर में है और ना सर सय्यद मर्हूम कोई अव्वली दर्जे के अरबी दान थे जो इस तरह की ग़लत बहस करके अपनी लियाक़त पर दाग़ लगाते। लिहाज़ा मुनासिब मालूम हुआ कि मैं इन शुकूक़ के माख़ज़ का भी पता लगाऊँ। चुनान्चे मैंने फ़ील-फ़ौर पता लगा लिया कि ये पूरी बहस मौलवी मुहम्मद अली साहब अमीर जमाअत अहमदिया लाहौर के तर्जुमा अल-क़ुर्आन से मन्क़ूल है। चुनान्चे मौलाना लिखते हैं कि :-

> "ऐसी की मुअन्यिद ये बात है कि **كلمته منه** के बाद फ़रमाया **اسمه** हालाँकि **كلمته** मुअन्नस है। तो पस **اسمه** में ज़मीर मुबश्शिर बह की तरफ़ जाएगी यानी उस का नाम जिसकी बशारत दी जाती है। कलमे की ज़मीर दूसरी जगह साफ़ मोअन्निस है। **كلمته القاها الى مريم** तो पस जब ज़मीर के लिए **المبشر به** की तावील करनी पड़ी तो **كلمة منه كو يبشرك** का मफ़ऊल-ए-सानी बनाने की कोई ज़रूरत नहीं।" **(निकात-उल-क़ुर्आन** सफ़ा 231, नोट 437 और **बयान-उल-क़ुर्आन** नोट नम्बर 423 सफ़ा 310 और **तर्जुमा अल-क़ुर्आन** अंग्रेज़ी नोट नम्बर 423)

मुक़ाबला करो **शक़ "ब"** के साथ।

"कलमा एक तो नहवियों (ग्रामर) की इस्तिलाह है और सिर्फ ऐसे लफ़्ज़ पर बोला जाता है। जो मफ़रूज़ी के लिए वज़ा किया गया हो। मगर क़ुर्आन-ए-करीम में और आम मुहावरे में कलमे से मुराद कलाम लिया गया है जैसा क़ाफ़ के इस क़ौल पर कि, सूरह अल-मोमिनून आयत 99-100, رَبِّ ارْجِعُوْنِ لَعَلِّيْٓ اَعْمَلُ صَالِحًا فِيْمَا تَرَكْتُ फ़रमाया सूरह अल-मोमिनून आयत 100, اِنَّهَا كَلِمَةٌ هُوَ قَآئِلُهَا जिस में इस तारी कलाम को कलमा फ़रमाया है। ऐसा ही फ़रमाया सूरह आराफ़ आयत 137, وَ تَمَّتْ كَلِمَتُ رَبِّكَ الْحُسْنٰى عَلٰى بَنِيْٓ اِسْرَآءِيْلَ इस कलमे से मुराद अल्लाह तआला का ये वाअदा लिया गया है। सूरह अल-क़िसस आयत 5, وَنُرِيْدُ اَنْ نَّمُنَّ عَلَى الَّذِيْنَ اسْتُضْعِفُوْا فِي الْاَرْضِ وَ نَجْعَلَهُمْ اَئِمَّةً وَّ نَجْعَلَهُمُ الْوٰرِثِيْنَ पस सूरह आले-इमरान 39, بِكَلِمَةٍ مِّنَ اللّٰهِ से मुराद अल्लाह तआला का कलाम है।... अब अल्लाह के والكلام مُصَدِّقًا بِكَلِمَةٍ مِّنَ اللّٰهِ जिसकी तस्दीक़ हज़रत यहया अलैहिस्सलाम ने की वो सिर्फ़ इनकी पैदाइश का ज़िक्र है। और दर-हक़ीक़त यहां मुराद सिर्फ इसी क़द्र है कि वो अल्लाह तआला के उस कलाम को जो पेशगोई के रंग में हज़रत ज़करीयाह पर ज़ाहिर हुआ पूरा कर दिखाएँगे। كلمة من الله के यही मअनी यानी अल्लाह तआला का कलाम ब-रंग पेशगोई हज़रत मसीह के मुताल्लिक़ भी है। सूरह तहरीम आयत 12, में हज़रत मर्यम के मुताल्लिक़ है وَصَدَّقَتْ بِكَلِمٰتِ رَبِّهَا उसने अपने रब के कलमात को सच्च कर दिखाया ये भी इसी हाल में दुरुस्त हो सकता है कि कलमात (كلمات) से मुराद पेश गोईयां ली जाएं। ना كلمات ربها से मुराद मसीह हैं और ना كلمة من الله से मुराद मसीह है। (नोट 431) अपने कलमात के मुताल्लिक़ अल्लाह तआला फ़रमाता है कि अगर

मेरे रब के कलमात के लिए समुंद्र भी स्याही बन जाएं तो मेरे रब के कलमात इस क़द्र लातादाद व लातहसा हैं कि समुंद्र ख़त्म हो जाएं मगर वो कलमात ख़त्म ना हूँ।"

(नोट नम्बर 437 निकात-उल-क़ुर्आन)

मुक़ाबला करो **"शक़ ज, द"** के साथ।

(सूरह आले-इमरान आयत 45)

إِنَّ اللَّهَ يُبَشِّرُكِ بِكَلِمَةٍ مِّنْهُ اسْمُهُ الْمَسِيحُ عِيسَى ابْنُ مَرْيَمَ

तर्जुमा : "अल्लाह तआला तुझे बशारत देता है बज़रीया अपने एक कलाम के (एक लड़के की) जिसका नाम मसीह ईसा बिन मर्यम है।"

"आम तौर पर इस के मअनी यूं किए जाते हैं। अल्लाह तआला तुझे अपने एक कलमे की बशारत देता हैं जिसका नाम मसीह इब्ने मर्यम है। इस लिहाज़ से मसीह को अल्लाह तआला का एक कलमा कहा गया है।... मगर मैं कहता हूँ कि يُبَشِّرُكِ بِكَلِمَةٍ مِّنْهُ में ब ज़रिये के लिए है। यानी मअनी ये हैं कि "ऐ मर्यम अल्लाह तआला तुझे अपने एक कलमे के ज़रीये बशारत देता है।" जैसा कि हज़रत इब्राहिम को इस्हाक़ की बशारत मिली, يبشرك بالحق हम तुझे हक़ के ज़रीये बशारत देते हैं। ये मुराद नहीं कि अल-हक़ की बशारत देते हैं। इस सूरह में मफ़ऊल को महज़ूफ़ करके इस की बजाए फ़र्मा दिया اسْمُهُ الْمَسِيحُ। वो जिसकी बशारत हम देते हैं उस का नाम मसीह है। तो كَلِمَةٍ مِّنْهُ से मुराद सिर्फ अल्लाह तआला की पेशगोई है।" (नोट नम्बर सफ़ा 437 **निकात-उल-क़ुर्आन** और **तर्जुमा अल-क़ुर्आन** अंग्रेज़ी नोट नम्बर 437)

मुक़ाबला करो **शक़ "ह"** के साथ।

अब इन शुक़ूक़ के माख़ज़ों के मालूम होने के बाद हर एक के मुताल्लिक़ जुदागाना जुदागाना बह्स करेंगे। **शक़ "ब"** से हमारी इस राय की जो हम मुदीर साहब की अरबी दानी की निस्बत कहीं अगले सफ़्हों में ज़ाहिर कर चुके हैं। ऐसी तस्दीक़ होती है जिसको कोई शख़्स किसी हालत में रद्द नहीं कर सकता है। मैं इस को तस्लीम करता हूँ कि "कलमा" लफ़्ज़ मुअन्नस है। और इस को भी तस्लीम करता हूँ कि "अस्मा" में ज़मीर मुज़क्कर की है। लेकिन आपके इस जुम्ले को कि "अगर वो मक़्सूद होता तो (अस्महा) होना चाहिए था" सरासर लगू समझता हूँ। क़िब्ला आपने नक़्ल करने की ख़ूबी तो ख़ूब दिखाई लेकिन इस पर ग़ौर ना किया कि मौलाना मुहम्मद अली साहब ने जो कुछ लिखा है वो क़वानीन नहवियह (ग्रामर) के एतबार से सही भी है या नहीं। अब सुनिए इल्म नहू (वो इल्म जिससे कलमात को जोड़ना तोड़ना और उनका बाहमी ताल्लुक़ मालूम हो) का ये एक बय्यन क़ानून है कि ऐसे अल्फ़ाज़ को जो कि लफ़्ज़न मुअन्नस में जब किसी मुज़क्कर के लिए बतौर इस्म के मुस्तअमल हो जाएं तो इस हालत में उनके लिए फ़ेअल या ज़मीर लाने में उनकी सानियस (تانیث) लफ़्ज़ी साक़ित-उल-एतबार हो जाती है। और उन के मफ़्हूम और मुसम्मा का लिहाज़ वाजिब हो जाता है। अब इस की दलील भी सुन लीजिए। तलहा (طلحہ) एक लफ़्ज़ है जो बईना कलमे की तरह मुअन्नस है। और आँहज़रत के एक निहायत मुम्ताज़ सहाबी का नाम है। अब मैं आपसे पूछता हूँ कि अगर तलहा के लिए अरबी में कोई फ़ेअल या ज़मीर लाई जाये तो इस की जिन्सियत क्या होनी चाहिए? आया मुज़क्कर या मुअन्नस? आप कहेंगे कि मुअन्नस होनी चाहिए क्योंकि आपने मान लिया है कि "चूँकि कलमा मुअन्नस है लिहाज़ा इस के लिए ज़मीर भी मुअन्नस होनी चाहिए।" बस यार ख़ूब। अब मैं तलहा के लिए अरबी में एक फ़ेअल मुअन्नस और एक ज़मीर मुअन्नस लाकर आपसे पूछता हूँ कि आया, ये जुम्ले सही और दुरुस्त हैं? कि قامت طلحه، طلحه قائمته وطلحة قائم ابوها आप तो ज़रूर कहेंगे कि दुरुस्त हैं लेकिन जिनको अरबियत से ज़रा भी मस है वो आप पर क़हक़हा लगाएँगे। क़िब्ला माफ़ौक़ के जुमलों की सही सूरतें यूं हैं, قائم طلحه صلحة قائم وطلحة قائم ابوه पस इस क़ायदे की रु से "अस्मा" में जो ज़मीर मुज़क्कर है वो बिल्कुल सही और दुरुस्त है। मैं सच्च सच्च अर्ज़ करता हूँ कि मैंने आपको इस तरह समझाने की कोशिश की है जिस तरह अपने शागिर्दों को समझाता हूँ अगर इस पर भी आपकी समझ में ना आए तो बेहतर है कि आप अपने उस्ताद मौलाना मुहम्मद अली साहब से इस्तिसवाब करें।

करम फ़रमाए मन ! ये क़ायदा अरबियत ही से मुख़्तस (मख़्सूस) नहीं है बल्कि उर्दू में भी राइज है। आप तो चश्म-ए-बद्दूर ना सिर्फ एक आला शायर हैं बल्कि एक मुम्ताज़ उर्दू इंशा-ए-पर्दाज़ भी हैं। फिर ना मालूम आपसे किस तरह ये बात पोशीदा रही? उर्दू ज़बान में वफ़ा, जफ़ा, अगर ग़लती नहीं करता तो नियाज़ (वर्ना बतावील नज़र) तो ज़रूर मुअन्नस हैं। अब अगर कोई शाइराँ अल्फ़ाज़ को बतौर तख़ल्लुस के इस्तिमाल करे तो आपके क़ायदे की रु से यूं कहना चाहिए कि "वफ़ा अच्छी शायर है" जफ़ा साहिबा मुशाएरे में तशरीफ़ लाईं" और नियाज़ (बतावील नज़र) अच्छी तबीयत रखती है।" अब आप ही इन्साफ़ से फ़रमाएं कि उर्दू दां अस्हाब इन जुमलों को सुनकर क्या फ़त्वा लगाएँगे यही ना कि "इनका उर्दू सबसे अच्छा है।" !!!

क़िब्ला आपको **शक़ "ज"** में हम-चू माफ़ौक़ सख़्त मुग़ालता दिया गया है। अफ़्सोस तो ये है कि ख़ुद जनाब ने कलाम मजीद पर ग़ौर नहीं फ़रमाया और मौलाना मौलवी मुहम्मद अली साहब के एतबार पर लिख दिया कि कलाम मजीद में किसी जगह कलमे के मअनी लफ़्ज़ या कलाम के नहीं लिए गए अगर मैं सिर्फ एक ही आयत ऐसी पेश करूँ जिसमें "कलमा" बमाअनी "लफ़्ज़" या "कलाम" के हो तो आपके इस क़ायदा कुल्लिया को फ़ना के घाट उतारने के लिए काफ़ी है। लेकिन मैं ऐसी चंद आयतें पेश करूँगा।" पहली आयत (सूरह कहफ़ आयत 5)

مَا لَهُمْ بِهٖ مِنْ عِلْمٍ وَّلَا لِاٰبَآئِهِمْ ؕ كَبُرَتْ كَلِمَةً تَخْرُجُ مِنْ اَفْوَاهِهِمْ ؕ اِنْ يَّقُوْلُوْنَ اِلَّا كَذِبًا

तर्जुमा : "ना तो उनको इस बात का कुछ इल्म है और ना उनके बाप दादों के को इस का इल्म था। कैसी बड़ी बात इनके मुँह से निकलती है। सरासर झूट कहते हैं।"

दूसरी आयत मुलाहिज़ा फ़रमाएं। (सूरह मोमिनून आयत 99-100)

حَتّٰۤى اِذَا جَآءَ اَحَدَهُمُ الْمَوْتُ قَالَ رَبِّ ارْجِعُوْنِ لَعَلِّيْۤ اَعْمَلُ صَالِحًا فِيْمَا تَرَكْتُ كَلَّا ؕ اِنَّهَا كَلِمَةٌ هُوَ قَآئِلُهَا

तर्जुमा : "जब इनमें से किसी को मौत आएगी तो कहेगा कि ऐ रब मुझको फिर भेजो।

शायद में कुछ कलाम काम करूँ जो पीछे छोड़ आया हूँ। ये सिर्फ़ बात ही बात है जो वो कहता है।"

मज़ीदबराँ तीसरी आयत पेश-ए-ख़िदमत है। (सूरह तौबा आयत 74)

يَحْلِفُوْنَ بِاللّٰهِ مَا قَالُوْا وَلَقَدْ قَالُوْا كَلِمَةَ الْكُفْرِ وَ كَفَرُوْا بَعْدَ اِسْلَامِهِمْ

मैं ख़ुद इस आयत का तर्जुमा नहीं करूँगा बल्कि मौलाना मौलवी अशरफ़ अली साहब थानवी का तर्जुमा लिखूँगा जो ज़माना हाज़िर के एक मुस्तनद आलिम हैं। वो तर्जुमा ये है :-

तर्जुमा : "क़समें खाते हैं अल्लाह की और हमने नहीं कहा। और बेशक कहा है कि उन्होंने लफ़्ज़ कुफ़्र का और मुन्किर हो गए हैं मुसलमान हो कर।"

आयत नम्बर अव्वल में ना फ़क़त कलमा ब-माना-ए-बात (लफ़्ज़) के मज़्कूर है बल्कि कलमे की तारीफ़ भी इस के साथ मुन्दरज है ताकि उस के लफ़्ज़ होने में किसी क़िस्म का शक बाक़ी ना रहे। इल्म-ए-नहव में कलमे की तारीफ़ ये लिखी हुई है कि (कलिमा) लफ़्ज़ वज़अ बमाअनी मुफ़र्रीदन यानी कलमा लफ़्ज़ मुफ़र्रद व मआनी दार है। और लफ़्ज़ की तारीफ़ शरह हामी में ये लिखी है कि, **اللفظ فی الغته دی الشی من الفمه یقال اکلمت التمرة ولفظت النواة** यानी लुग़त में लफ़्ज़ के मअनी किसी चीज़ को मुँह से फेंकना है। अरब के लोग कहा करते हैं कि मैंने खजूर खाली और इस की गुठली मुँह से फेंक दी। अब इस तारीफ़ को आयत नम्बर अव्वल से मुक़ाबला करके दाद दीजिए कि किस माअनी-ख़ेज़ इख़्तिसार के साथ इस में लिखा है कि **كَلِمَةً تَخْرُجُ مِنْ اَفْوَاهِهِم** इसी तरह आयत नम्बर दोम में कलमे के बाद **قَآئِلُهَا** को लाकर इस के लफ़्ज़ होने पर मुहर कर दी क्योंकि अरबी में कोई शख़्स क़ाइल (कहने वाला) नहीं कहा जा सकता है तावक़्त ये कि वो अपने मुँह से कुछ ना कहे। और तारीफ़ बाला से साबित है कि जो कुछ मुँह से निकलता है वो लफ़्ज़ होता है या अल्फ़ाज़। आयत नम्बर सोम के मुताल्लिक़ कुछ कहने की ज़रूरत ही नहीं है क्योंकि हिन्दुस्तान के एक चोटी के आलिम ने कलमे का तर्जुमा "लफ़्ज़" किया है।

इस क़द्र लिखने के बाद अब इस की ज़रूरत नहीं है कि मैं आपको **"शक़ द"** की तरफ़ मुतवज्जोह करूँ क्योंकि मैं सुतूर बाला में साबित कर चुका हूँ कि क़ुर्आन

मजीद में कलमे के मअनी "लफ़्ज़" के भी आए हैं। चूँकि आपने दो तीन आयतें अपने सबूत में पेश की हैं लिहाज़ा मुनासिब मालूम होता है कि उन पर भी सरसरी नज़र डालूं।

सबसे पहली आयत जिससे आपने इस्तिदलाल (दलील देना) किया है कि कलमा ब-माना-ए-पेशगोई है ये है कि "مُصَدِّقًا بِكَلِمَةٍ مِّنَ اللهِ" अगर कुछ देर के लिए ये मान लिया जाये कि इस आयत में कलमे से मुराद पेशगोई है तो इस आयत का तर्जुमा यूं होगा, कि "अल्लाह तुझको यहया की ख़ुशख़बरी देता है जो पेशगोई की तस्दीक़ करने वाला है।" ये ज़ाहिर है कि तस्दीक़ उस चीज़ कि की जाती है जो मुईन हो यानी वो ऐसी खुली हुई बात हो कि बरवक़्त तस्दीक़ मुसद्दिक़ की सच्चाई व दरोग़ बानी साफ़ तौर पर अयाँ हो जाए। हालाँकि इस आयत में किसी क़िस्म की तख़्सीस तईन नहीं है। लिहाज़ा आपका ये कहना ग़लत है कि "यहां कलमे से मुराद पेशगोई है।" यही सबब है कि सर सय्यद मर्हूम भी इस आयत में कलमे का तर्जुमा पेशगोई नहीं करते बल्कि इस से मुराद अल्लाह का हुक्म या अल्लाह की किताब लेते हैं। चुनान्चे वो लिखते हैं कि, مُصَدِّقًا بِكَلِمَةٍ مِّنَ اللهِ (तफ़्सीर-उल-क़ुर्आन आले-इमरान सफ़ा 14) हालाँकि सर सय्यद मर्हूम भी ग़लती पर हैं लेकिन आपसे कमतर। आयत ज़ेर-ए-बहस के सही मअनी जिसको तमाम मुफ़स्सिरीन ने भी तस्लीम किया है ये हैं कि "यहां पर कलमे से मुराद हज़रत ईसा हैं।" जो इन्जील-ए-मुक़द्दस के भी ऐन मुवाफ़िक़ है। इन्जील-ए-मुक़द्दस में साफ़ लिखा हुआ है कि हज़रत यहया हज़रत ईसा के मुसद्दिक़ थे। (मत्ती 3:11 ता 12; मर्क़ुस 1:7 ता 8; लूक़ा 3:15 ता 17; यूहन्ना 3:26 ता 29) बाक़ी रहीं वो तीन आयतें जिनमें लफ़्ज़ कलमात आया है। वहां भी इनके मअनी हरगिज़ पेश गोईयां के नहीं हैं बल्कि अल्फ़ाज़ रब्बानी या कुतुब रब्बानी के हैं। लेकिन ये कहना कि क़ुर्आन मजीद में "कलमा या कलमात" एक ही मअनी में मुस्तअमल हुए सरासर नादानी है।

अब सवाल ये पैदा होता है कि अगर क़ुर्आन मजीद में "कलमा" या "कलमात" मुख़्तलिफ़ माअनों में इस्तिमाल हुए हैं तो इनके माअनों की तअय्युन और तहदीद किसी तरह हो सकती है? सवाल का जवाब ये है कि क़रीना (बहमी ताल्लुक़) और सियाक़ व सबाक़ से मसलन "कलमात" बक़ररीना मिदाद (स्याही) अल्फ़ाज़ के माअनों में है या बमाअना-ए-मजमूआ अल्फ़ाज़ यानी किताब व क़स अला हज़ा।

मुदीर साहब निगार की अरबी दानी का मज़ीद सबूत

आपकी **शक़ "ह"** को पढ़ कर जी में आया कि इस को काट कर ज़मीनदार के दफ़्तर में मुदीर साहब फ़ुकाहात और इन्क़िलाब लाहौर में मुदीर साहब अफ़्क़ार व हवादिस की ख़िदमत में भेज दूं। लेकिन ये सोच कर बाज़ रहा कि मौलाना ज़फ़र अली और हज़रत सालिक जैसे ग़य्यूर मुसलमानों से ये बईद है कि वो एक ईसाई और अफ़्ग़ान ईसाई के मज़्मून को अपने मख़्सूस में कालम में जगह दें और मज़्मून भी जब कि आपके एक हम-पेशा के मुताल्लिक़ हो। लिहाज़ा अरबी दान तब्क़े की ज़ियाफ़त तबाअ के लिए ज़ेल में दर्ज किया जाता है आप लिखते हैं कि :-

> "और इस तरह महज़ूफ़ात पुर करने के बाद (सूरह आले-इमरान आयत 45) यूं होगी, اِنَّ اللّٰهَ يُبَشِّرُكِ بِكَلِمَةٍ مِّنْهُ اسْمُهُ الْمَسِيْحُ (بولد) इस इबारत के शुरू में आपने ये लिखा है कि "लफ़्ज़ يُبَشِّرُكِ के बाद महज़ूफ़ है जैसा कि (सूरह हिज्र की आयत 55) में قَالُوْا بَشَّرْنَاكَ के बाद लफ़्ज़ वलद (ولد) महज़ूफ़ है।"

अल्लाहु अकबर ! हिन्दुस्तान में अरबियत के फ़ुक़दान पर जिस क़द्र मातम किया जाये इतना ही कम है अगर हज़रत नियाज़ को इस का यक़ीन होता कि इस कस मप्रुसी के बावजूद हिन्दुस्तान मैं हज़ारों अरबी दान मौजूद हैं तो क्या उनको "महज़ूफ़ात" पुर करने की जुर्आत होती? और इस बेबाकी के साथ क़ुर्आन मजीद की आयतों को मजरूह करते? क़ुर्आन मजीद को बाज़ीचा इतफ़ाल बनाना। अपनी राय और मर्ज़ी पर उस की आयात की तफ़्सीर करना अगर कुछ भी हक़ीक़त रखता है तो नियाज़ साहब से जाकर पूछो।

गर तू क़ुर्आन बदीन नमत ख़वानी

बबरी रौनक मुसलमानी

मुहतरमी आयत اِنَّ اللّٰهَ يُبَشِّرُكِ بِكَلِمَةٍ مِّنْهُ को सूरह हिज्र की आयत 55 पर क़ियास करना या क़ियास में अल-फ़ारिक़ और अरबी ना जानना है। सूरह हिज्र की आयत 55 में इस वजह से लफ़्ज़ "بغلام" जिसे आप "ولد" कहते हैं कि महज़ूफ़

(محذوف) माना जा सकता है कि फ़ेअल يُبَشِّرُكِ दो मफ़ऊल चाहता है और यहां सिर्फ एक मफ़ऊल "ک" (काफ़) है। इसलिए इस के मअनी पूरे करने के लिए बक़रीना (आयत 54) يُبَشِّرُكِ के बाद بغلام को जो (आयत 54) में मज़्कूर है महज़ूफ़ मानते हैं। लेकिन आयत إِنَّ اللّٰهَ يُبَشِّرُكِ بِكَلِمَةٍ مِّنْهُ पर ये क़ियास नहीं किया जा सकता है क्योंकि इस आयत में दोनो मुफ़ऊलीन (مفعولین) मौजूद हैं। मफ़ऊल अव्वल "ک" (काफ़) और मफ़ऊल "सानी" بِكَلِمَةٍ مِّنْهُ जो सिफ़त मौसूफ़ है।

दूसरी ग़लती आपकी ये है कि जैसा कि आपने लिखा है कि, "लफ़्ज़ ولد (वलद) يُبَشِّرُكِ के बाद महज़ूफ़ है।" तो मुनासिब था कि, ولد (वलद) يُبَشِّرُكِ के बाद रखकर यूं लिखते, إِنَّ اللّٰهَ يُبَشِّرُكِ بولد بِكَلِمَةٍ مِّنْهُ जो एक मुहम्मल (बेमाअ्नी, बेमतलब) जुम्ला बनता है। हालाँकि आपने بولد को بِكَلِمَةٍ مِّنْهُ के बाद रखकर यूं लिखा है कि, إِنَّ اللّٰهَ يُبَشِّرُكِ بِكَلِمَةٍ مِّنْهُ (بولد) اسْمُهُ الْمَسِيْحُ गोया कि आप अपनी इबारत से ये ज़ाहिर करना चाहते हैं कि "कलमा" बदल है लफ़्ज़ "वलद" का जो बिल्कुल ग़लत है क्योंकि कलमा मुअन्नस है और वलद मुज़क्कर है। ये एक दूसरे के बदल नहीं हो सकते।

तीसरी ग़लती आपकी ये है कि आपने اسْمُهُ مَسِيْحُ। में से मसीह के शुरू से अलिफ़ लाम को हज़फ़ करके आयत को बे ज़ीनत कर दिया। अगर आपको अलिफ़ लाम के इस्तिमाल के क़वानीन मालूम ना थे तो आप इस को हकाई सूरत में اسْمُهُ। الْمَسِيْحُ। लिख सकते थे। लेकिन बे-ख़बरी का क्या ईलाज !

नियाज़ साहब का अपने मुँह से इक़रार कि मसीह ख़ुदा का बेटा है

अब मैं इन तमाम नहवी निकात से क़त-ए-नज़र करके कहता हूँ कि ये तमाम उसूल ग़लत हैं बल्कि नियाज़ साहब सही और दुरुस्त फ़र्माते हैं कि يُبَشِّرُكِ के बाद بولد महज़ूफ़ है। पस आयत ज़ेरे ग़ौर की सही सूरत ये होगी कि إِنَّ اللّٰهَ يُبَشِّرُكِ بولد مِّنْهُ यानी ऐ मर्यम ख़ुदा तुझको अपने बेटे की ख़ुशख़बरी देता है जिसका नाम मसीह

होगा और लक़ब इब्ने मर्यम दर-हक़ीक़त हम मसीहियों का भी यही अक़ीदा है कि मसीह को जो इन्जील मुक़द्दस में "कलाम" कहा गया है इस के मअनी "इब्ने-अल्लाह" के हैं। इन्जील शरीफ़ में इस के सैंकड़ों शवाहिद मौजूद हैं ये है "इस क़ुव्वत बरतर व आला" की हिक्मत जिसने आप ही के मुँह से कह दिया कि "मसीह ख़ुदा का बेटा है।"

فالحمدالله علی ذالك

तर्जुमा : "शुक्र अल्लाह कि شکر اللہ کہ میاں من و تو صلح فتاد"

وَّلَمْ يَمْسَسْنِيْ بَشَرٌ पर बहस

इस बहस को जारी रखते हुए आप तहरीर फ़र्माते हैं कि :-

"आले-इमरान की दूसरी आयत जो इस अम्र के सबूत में पेश की जाती है ये है।" (सूरह आले-इमरान आयत 47)

قَالَتْ رَبِّ اَنّٰى يَكُوْنُ لِيْ وَلَدٌ وَّلَمْ يَمْسَسْنِيْ بَشَرٌ ؕ قَالَ كَذٰلِكِ اللّٰهُ يَخْلُقُ مَا يَشَآءُ ؕ اِذَا قَضٰۤى اَمْرًا فَاِنَّمَا يَقُوْلُ لَهٗ كُنْ فَيَكُوْنُ

तर्जुमा : "मर्यम ने कहा ऐ परवरदिगार मेरे लड़का कैसे हो सकता है दरां हालेका मुझे किसी मर्द ने नहीं छुआ। ख़ुदा ने कहा यही होगा। अल्लाह पैदा करता है जो वो चाहता है। जब वो किसी काम का करना ठहरा लेता है तो कह देता है हो जा और वो हो जाता है।"

मर्यम का ये कहना कि मुझे किसी मर्द ने नहीं छुआ। इस बात का सबूत नहीं कि ईसा के कोई बाप ना था क्योंकि मर्यम का ताल्लुक़ इज़्दिवाज़ तो यक़ीनन इस से साबित है कि उनके और औलादें भी थीं फिर जिस तरह और औलादें ताल्लुक़ इज़्दिवाज़ के बाद हुईं इसी तरह हज़रत ईसा की विलादत हुई होगी। अलबत्ता ये हो सकता है कि जिस वक़्त

> मर्यम को बशारत दी गई उस वक़्त तक उस का निकाह ना हुआ होगा। और इसी लिए उन्होंने कहा कि मुझे तो अब तक मर्द ने नहीं छुआ है लेकिन बाद को ताल्लुक़ इज़्दिवाज़ क़ायम हुआ और हज़रत ईसा पैदा हुए।"

नाज़रीन को याद होगा कि मैं शुरू ही से कहता आया हूँ कि जो कुछ हज़रत नियाज़ ने लिखा है वो उनकी दिमाग़ सोज़ी और उरक्रेज़ी का नतीजा और उन के ज़ेहन-ए-रसा का ख़ुलासा नहीं बल्कि सर सय्यद मर्हूम और मौलाना मुहम्मद अली साहब की इबारात की नक़्लें हैं जिनको वो अपनी तरफ़ निस्बत देते हैं। इबारत बाला भी उन्ही संगलाख़ों में से एक संग-रेज़ा है जिसको हज़रत नियाज़ ने ग़लती से दर शहूरा समझ कर नक़्ल किया है। मौलाना मौलवी मुहम्मद अली साहब आयत-ए-माफ़ौक़ की तहत में लिखते हैं कि :-

> لَمْ يَمْسَسْنِيْ بَشَرٌ से ये इस्तिदलाल नहीं हो सकता कि आइन्दा भी मर्यम को बशर ने नहीं छूना था। क्योंकि हज़रत ईसा की विलादत के मसअले को अगर मुतनाज़ेअ भी माना जाये कि वह बग़ैर मस बशर (इंसान के छूने) के पैदा हुए थे या मस बशर से, ये अम्र बहर-ए-हाल मुसल्लम है कि हज़रत ईसा के और भी भाई और बहनें थीं वो तो आख़िर मस बशर से ही पैदा हुए थे। पस وَلَمْ يَمْسَسْنِيْ بَشَرٌ सिर्फ़ गुज़श्ता के मुताल्लिक़ है और आइन्दा के लिए नहीं।
>
> (नोट नम्बर 441 निकात-उल-क़ुर्आन उर्दू तर्जुमा-उल-क़ुर्आन नोट 427)

मैं इस मज़्मून पर कि हज़रत ईसा की विलादत कब हुई। आया निकाह के क़ब्ल या उस के बाद। इस किताब में ऊपर मुफ़स्सिल बहस कर चुका हूँ यहां उस के इआदा (दोहराई) करने की ज़रूरत नहीं है। यहां मुझे ये दिखाना है कि हज़रत नियाज़ को ना सिर्फ सर सय्यद मर्हूम से इख़्तिलाफ़ है बल्कि उनके दूसरे साहिबे माख़ज़ मौलाना मुहम्मद अली साहब के क़िब्ला व काबा हज़रत मिर्ज़ा साहब आँजहानी ग़फ़ुर-अल्लाह ज़नुबा से भी सख़्त इख़्तिलाफ़ है। जिनका ये दावा है कि क़ुर्आन दानी में उनकी हमसरी का दावा कोई नहीं कर सकता है। मिर्ज़ा साहब आँजहानी ग़फ़ुर-अल्लाह ज़नुबा अपनी किताब **कश्ती नूह** के सफ़ा 16 में लिखते हैं कि :-

> "और मर्यम की वो शान है जिसने एक मुद्दत तक अपने तईं निकाह से रोका। फिर बुज़ुर्गान क़ौम के निहायत इसरार से बावजाह हमल के निकाह कर लिया। गो लोग एतराज़ करते हैं कि बरख़िलाफ़ ताअलीम तो रात में ऐन हमल में क्योंकर निकाह किया गया और बतूल (कुँवारी) होने के अहद को क्यों नाहक़ तोड़ा गया है? मगर मैं कहता हूँ कि ये सब मजबूरियाँ थीं जो पेश आ गईं।"

आपने ग़ौर फ़रमाया होगा कि जनाब के साहिब-ए-माख़ज़ के मुर्शिद किस सफ़ाई के साथ लिखते हैं कि हज़रत मर्यम सिद्दीक़ा ने "ब-वजह हमल के निकाह कर लिया।" यानी उनके निकाह करने का सबब "हमल" है जो "निकाह" पर मुक़द्दम है। अब सवाल ये बाक़ी रहेगा कि उनको ये हमल किस तरह हुआ?

आर्या समाजी अलैहिम माअलैहिम ये कहते हैं कि मआज़ अल्लाह :-

"नाजायज़ तौर पर हुआ।"

(सत्यार्थ प्रकाश सफ़ा 629 बाब 13)

सर सय्यद मर्हूम कहते हैं कि :-

"मंगनी की हालत में यूसुफ़ से हुआ।"

(तफ़्सीर-उल-क़ुर्आन)

आप और आपके साहिब-ए-माख़ज़ मौलवी मुहम्मद अली साहब फ़र्माते हैं कि "निकाह के बाद हुआ होगा।" जिसकी मिर्ज़ा साहब आँजहानी ग़फ़ुर-अल्लाह ज़नुबा तर्दीद करते हैं। और तमाम मुफ़स्सिरीन उज़्ज़ाम व तमाम मुहद्दिसीन किराम व कुल मुतकल्लिमीन अल्लामा और तमाम कुतुब समाविया ज़ीलमजदवाला एहतिराम ये कह रहे हैं कि ख़ुदा की क़ुद्रत से हुआ इन्जील मुक़द्दस के बाअज़ हवालेजात तो हम इस किताब में लिख चुके हैं। मुफ़स्सिरीन व मुहद्दिसीन व मुतकल्लिमीन इस्लाम के अक़्वाल इसलिए पेश नहीं कर सकते कि किताब की ज़ख़ामत बहुत बढ़ जाएगी। अगर हमारे करम फ़र्मा मुतालिबा करें तो एक जुदागाना रिसाले की सूरत में पेश किए

जा सकेंगे। अब सिर्फ क़ुर्आन-ए-करीम की आयत माफ़ौक़ पर बहस करना और हज़रत नियाज़ की ग़लती का इज़्हार करना बाक़ी रह गया है सो वो भी सुन लीजिए।

मसीह की विलादत बे-पिदर (बगैर बाप) के पाँच सबूत

हज़रत ईसा के बग़ैर बाप पैदा होने का पहला सबूत लफ़्ज़ كذالك (कज़ालिक)

ये एक हक़ीक़त है जिससे कोई इन्कार नहीं कर सकता कि एक इस्मत मआब व अफ़त इंतिसाब कुँवारी लड़की से अगर यकायक ये कहा जाये कि "तेरे लड़का होगा" तो इस अफ़ीफ़ा की हैरत और इस्तिजाब (हैरानी) की कोई इंतिहा ना रहेगी। यही वाक़िया हज़रत मर्यम को उस वक़्त दरपेश आया "जबकि फ़रिश्तों ने कहा कि ऐ मर्यम अल्लाह तुझको ख़ुशख़बरी देता है अपनी तरफ़ से एक कलमे की।" तो मर्यम सिद्दीक़ा बेहद मुतहय्यर हुईं और अपनी हैरत को इन अल्फ़ाज़ में ज़ाहिर किया "किस तरह मेरे लड़का होगा जबकि किसी मर्द ने मुझे छुआ तक भी नहीं है।" अब अगर ख़ुदा को ये मंज़ूर होता कि हज़रत ईसा अलैहि सलातो वस्सलाम की विलादत ताल्लुक़ इज़्दिवाज़ के क़ायम होने के बाद मसास बशरी (इंसान के छूने) से हो तो मर्यम सिद्दीक़ा को जवाब में ये कहना चाहिए था वे ويمسسك या निहायत वाज़ेह सूरत में "बशर" (بشر) पर अलिफ़ लाम अहद ज़हन बढ़ा कर यूं कहना चाहिए था कि ويمسسك البشر "यानी तेरा ख़ावंद तुझे छूएगा" लेकिन फ़रिश्ता इस क़िस्म के तमाम जुमलों से जिनसे मर्यम सिद्दीक़ा का ताल्लुक़ इज़्दिवाज़ साबित हो एराज़ (रुगरदानी, मुँह फेरना) करता है। और ये बात ना तो मेरी समझ में आती है और ना दुनिया के किसी अक़्लमंद शख़्स की समझ में आ सकेगी कि हज़रत ईसा की विलादत "ताल्लुक़ इज़्दिवाज़" के ज़रीये से होने वाली थी तो फ़रिश्ते ने इस से क्यों एअराज़ किया और क्यों साफ़-साफ़ ना बतलाया? लेकिन ख़ुदा को तो ये मंज़ूर था कि हज़रत ईसा की विलादत मुवासलत व मुवाफ़अत बशरी के बग़ैर महज़ उस की क़ुद्रत के इज़्हार के तौर पर हो। चुनान्चे फ़रिश्ते ने इसी अम्र का इज़्हार मर्यम सिद्दीक़ा पर बदीं अल्फ़ाज़ किया कि "कज़ालिक" (كذالك) हमारे फ़ाज़िल मुख़ातिब ने जो अरबी दानी पर बहुत ही नाज़ाँ मालूम होते हैं कि "कज़ालिक" (كذالك) के मुताल्लिक़ जो कुछ

सुपुर्द-ए-क़लम फ़रमाया है वो अरबी दान अस्हाब के लिए मन लताइफ़-उल-अदब से कमतर तहसीन आफ़रीन नहीं है आप लिखते हैं कि :-

> "यहां पर एक और नुक्ता क़ाबिल-ए-ग़ौर है वो ये कि **قَالَ كَذٰلِكَ** आगे की इबारत **اللّٰهُ يَفْعَلُ مَا يَشَآءُ** (सूरह आले-इमरान आयत 40) से मुताल्लिक़ है या नहीं। (सूरह मर्यम आयत 9) में भी यही अल्फ़ाज़ आए हैं लेकिन इस तरह **قَالَ كَذٰلِكَ قَالَ رَبُّكَ هُوَ عَلَيَّ هَيِّنٌ** इस से ये मालूम होता है कि जिस तरह सूरह मर्यम में **قال كذلك** अलैहदा है इसी तरह सूरह आले-इमरान में भी और इस सूरत में इस का मतलब होगा कि जब मर्यम ने कहा कि मेरे कैसे बेटा होगा जबकि मुझे किसी मर्द ने नहीं छुआ तो फ़रिश्ते ने कहा **كَذٰلِكَ** (ऐसा होगा) यानी तुम्हें मर्द छूएगा और तुम्हारे औलाद होगी।"

जो शख़्स ये दावा करे कि **قَالَ كَذٰلِكَ** अलैहदा है और फिर **كَذٰلِكَ** का तर्जुमा "ऐसा होगा" करे। अरबियत की मिट्टी पलीद करना अगर मक़्सूद नहीं है तो और क्या है? हमारे करम फ़र्मा को तो इतना भी मालूम नहीं कि **كَذٰلِكَ** क्या बला है। इस्म है फ़ेअल है, हर्फ़ या मुफ़रद है या मुरक्कब है। क्या है या क्या नहीं है। आपने क़ुर्आन मजीद के किसी उर्दू तर्जुमे में **كَذٰلِكَ** के नीचे "ऐसा होगा" देख लिया होगा सही या ग़लत बगर्दन मुतर्जिम कह कर यहां लिख दिया। बस आप अरबी दानों में शामिल हो गए।

क़िब्ला "कज़ालिक" (**كَذٰلِكَ**) बनज़र तफ़्सील मुरक्कब है इन अजज़ा से : काफ़ (ك) हर्फ़-ए-तश्बीह व "ज़ा" (ذا) इस्म-ए-इशारा क़रीब "लाम" (ل) हर्फ़ तबईद "काफ़" (ك) हर्फ़ ख़िताब से व बनज़र जमाल "काफ़" (ك) हर्फ़-ए-तश्बीह व ज़ालिक (ذالك) इस्म-ए-इशारा बईद से। इन दोनों सूरतों में "कज़ालिक" (**كَذٰلِكَ**) के तर्जुमे में दो बातों का लिहाज़ रखना वाजिब है यानी (1) मुशब्बेह बह (مشبہ بہ) और (2) मशार इलय्या (مشار الیہ) का। पस कज़ालिक (**كَذٰلِكَ**) का सही तर्जुमा ये है कि "जैसा मैंने कहा है उसी हालते अदम-ए-मसास बशरी (बगैर आदमी के छुए) मैं तेरे लड़का होगा।" और अगर हालते अदम मसास बशरी मशार इलय्या (مشار الیہ) नहीं है तो जुम्ला **اللّٰهُ يَفْعَلُ**

مَا يَشَآءُ و كُنۡ فَيَكُوۡنُ बेमाअनी हो जाते हैं। क़ुर्आन-ए-करीम में ये दोनो जुम्ले अम्र फ़ोक़-उल-आदत (आम क़ुदरत वाक़ियात से हट कर) के वाक़िये होने पर इस्तिमाल हुए हैं। मसलन जब हज़रत ज़करीया ने कहा कि "ऐ परवरदिगार किस तरह मेरे लड़का होगा हालाँकि मैं बूढ़ा हो चुका हूँ और मेरी बीवी भी बाँझ है तब अल्लाह ने फ़रमाया इसी हालत[5] में लड़का हो जाएगा क्योंकि अल्लाह जो कुछ इरादा करता है उस को कर गुज़रता है।" (इमरान आयत 40 तर्जुमा अज़ मौलाना अशरफ़ अली साहब थानवी) इसी तरह क़ुर्आन मजीद में जितनी दफ़ाअ जुम्ला "कुन फयाकून" (كُنۡ فَيَكُوۡنُ) इस्तिमाल हुआ है उतनी दफ़ाअ अम्र ख़रक़-उल-आदत के वाक़ेअ होने का इज़्हार करता है। मैं क़ारईन की सहूलत के लिए ज़ेल में इन मुक़ामात के निशान लिखूँगा जहां-जहां ये जुम्ला वाक़ेअ हुआ है। और इल्तिमास करता हूँ कि हर एक मुक़ाम को ग़ौर से पढ़ कर तस्फ़ीया करें कि मैं हक़-बजानिब हूँ या हज़रत नियाज़। वो मुक़ामात ये हैं :-

क़ुर्आन मजीद सूरह 2 आयत 111, सूरह 113 आयात 42, 52 सूरह 6 आयत 76, सूरह 16 आयत 42, सूरह 19 आयत 36, सूरह 36 आयत 82, सूरह 40 आयत 70

हज़रत ईसा के बग़ैर बाप पैदा होने का दूसरा सबूत लफ़्ज़ "हय्यिन" (هَيِّنٌ)

अगरचे एक हक़ गो और हक़ पसंद शख़्स के लिए सबूते माफ़ोक काफ़ी से ज़्यादा तश्फ़ी वो अम्र है। लेकिन मैंने ये इल्तिज़ाम किया है कि चंद ऐसी मोटी मोटी बातें जिनको हज़रत नियाज़ का ज़हन बख़ूबी क़ुबूल कर सके विलादत मसीह के मुताल्लिक़ मुसलसल पेश करूँ। चुनान्चे लफ़्ज़ "हय्यिन" (هَيِّنٌ) इस सिलसिले की दूसरी कड़ी है। फ़रिश्ता मर्यम सिद्दीक़ा के पास आकर कहता है कि, اَنَا رَسُوۡلُ رَبِّكِ

---

[5] मैंने आयत माफ़ौक़ का तर्जुमा इरादा हकीम-उल-उम्मत हज़रत मौलाना अशरफ़ अली साहब थानवी मुतअना-अल्लाह बतूल हयाता के तर्जुमा क़ुरआन-ए-करीम से नक़्ल किया है ताकि अरबी दानों और नक़्क़ालों में फ़र्क़ मालूम हो सके हकीम-उल-उम्मत हज़रत मौलाना मौलवी अशरफ अली साहब चूँकि ज़माना हाज़िरा के यकता और मुमताज़ आलिम हैं इस लिए आपने کذالک ومشاری الیہ इसी हालत में गो बतलाया है जिस तरह मैंने हालत अदम मसास बशरी बतलाया है। (सुलतान)

لِاَهَبَ لَكِ غُلٰمًا زَكِيًّا "मैं भेजा हूँ तेरे रब कि दे जाऊं तुझको एक लड़का सुथरा" (सूरह मर्यम आयत 19) इस को सुनकर मर्यम सिद्दीक़ा कहती हैं कि, (सूरह मर्यम आयत 20) اَنّٰى يَكُوْنُ لِيْ غُلٰمٌ وَّلَمْ يَمْسَسْنِيْ بَشَرٌ وَّلَمْ اَكُ بَغِيًّا "कहाँ से होगा मेरे लड़का और छुआ नहीं मुझको आदमी ने और मैं बदकार भी ना थी।" इस के जवाब में फ़रिश्ता कहता है कि, قَالَ رَبُّكِ هُوَ عَلَيَّ هَيِّنٌ "इसी हालत में जैसा मैंने कहा तेरे लड़का होगा। फ़रमाया तेरे रब ने, वो मुझ पर आसान है।" लफ़्ज़ "हय्यिन" (هَيِّنٌ) इस मुक़ाम पर ख़ुदा की अज़मत और इक़्तिदार के इज़्हार के लिए वाक़ेअ हुआ है। यानी जिस बात को मर्यम सिद्दीक़ा मुहाल तसव्वुर करती थीं, उसी बात के मुताल्लिक़ ख़ुदा कहता है कि मैं इस के करने पर क़ादिर हूँ क्योंकि "वो मुझ पर आसान है।" अगर इस पेशगोई का ताल्लुक़ "ताल्लुक़ इज़्दिवाज़" के बाद से होता तो इस क़ौल से कि "वो मुझ पर आसान है" ख़ुदा की फ़ज़ीलत और तफ़व्वुक़ साबित नहीं हो सकता है। क्योंकि "आसान" को "आसान" कहना ना सिर्फ ख़ुदा का काम है बल्कि इन्सानों का भी काम है। पस अगर हम आपके क़ौल को सही मान लें तो इस का नतीजा ये होगा कि ख़ुदा की मज्बूरी और आजिज़ी का इक़रार करें।

हज़रत ईसा के बग़ैर बाप पैदा होने का तीसरा सबूत وَ كُنْتُ نَسْيًا مَّنْسِيًّا

हर एक वो शख़्स जिसको ख़ुदा ने दीदा हक़ बीन इनायत किया है सूरह मर्यम की इस आयत को कि, قَالَتْ يٰلَيْتَنِيْ مِتُّ قَبْلَ هٰذَا وَ كُنْتُ نَسْيًا مَّنْسِيًّا ﴿۲۳﴾ जब ग़ौर से पड़ेगा तो यक़ीनन इस से यही समझेगा कि मर्यम सिद्दीक़ा के ये रंज और हज़न के कलिमे वज़ा हमल की तक्लीफ़ की वजह से सरज़द नहीं हुए बल्कि महज़ बदनामी के डर से। क्योंकि ख़ुदा ने औरत की सरिश्त में ये बात रखी है कि वो औलाद के पैदा होने में इस क़द्र ख़ुशी महसूस करती है कि इस के बिल-मुक़ाबिल तमाम तकालीफ़ को निहायत सब्र व इस्तकलाल के साथ बर्दाश्त करती है। यही वजह है कि नाज़ुक से नाज़ुक औरत भी ब-वक़्त वज़ा हमल ये नहीं कहती है कि "काश इस तक्लीफ़ से पहले मैं मर चुकी होती।" मैंने चंद मुस्तनद और निहायत तजुर्बेकार लेडी डाक्टरों से इस मुआमले के मुताल्लिक़ दर्याफ़्त किया कि आया इनमें से किसी ने ब-वक़्त वज़ा हमल किसी औरत के मुँह से इस क़िस्म के कलमे सुने हैं। लेकिन उन्होंने इन्कार किया। बल्कि उनमें से एक ने तो यहां तक कहा कि मैं ऐसी हामिला औरतों के पास

रात-दिन रही हूँ जिन को दो-दो तीन-तीन दिन तक बेहद तक्लीफ़ होती रही, लेकिन किसी के मुँह से मैंने ऐसे कलमे नहीं सुने। एक लेडी डाक्टर साहिबा ने मुझसे कहा कि ब-वक़्त वज़ा हमल औरतों को बेशक तक्लीफ़ होती है, लेकिन उन औरतों को जो मेहनत की आदी होती हैं बहुत कम तक्लीफ़ होती है यहां तक कि धाती औरतें वज़ा हमल के बाद फ़ील-फ़ौर अपने काम काज में लग जाती हैं।

मुख़्तसर मर्यम सिद्दीक़ा के ये कलमे कि ऐ काश मैं इस से पहले मर चुकी होती और भूली-बिसरी हो गई होती वज़ा हमल की तक्लीफ़ पर नहीं बल्कि बदनामी के ख़ौफ़ पर दलालत करते हैं। और अल्फ़ाज़ "भूली-बिसरी" हो गई होती इस की मज़ीद ताईद करते हैं। क्योंकि अगर मर्यम सिद्दीक़ा वज़ा हमल की तक्लीफ़ की वजह से ये कहतीं तो उनका यह कहना काफ़ी होता कि "ऐ काश मैं इस से पहले मर चुकी होती" लेकिन ये कि मेरा नाम दुनिया के ज़हन से महव (गायब) हो जाए और तारीख़ के सफ़हात से मिट जाये। ऐसे अलफ़ाज़ हैं जो ख़ास बदनामी के ख़ौफ़ पर दलालत करते हैं।

हज़रत ईसा के बग़ैर बाप पैदा होने का चौथा सबूत وَ جَعَلْنٰهَا وَ ابْنَهَاۤ اٰیَةً لِّلْعٰلَمِیْنَ

हमारे करम फ़रमा ने (सूरह अम्बिया आयत 91) कि, وَ الَّتِیْۤ اَحْصَنَتْ فَرْجَهَا فَنَفَخْنَا فِیْهَا مِنْ رُّوْحِنَا وَ جَعَلْنٰهَا وَ ابْنَهَاۤ اٰیَةً لِّلْعٰلَمِیْنَ﴿۹۱﴾ सर सय्यद मर्हूम की तफ़सीर से नक़्ल करके किसी क़द्र कमो बेशी के साथ उन्ही के अल्फाज़ में इस के दो लफ़्ज़ों نفخ روح واحصنت पर यूं बहस की है कि :-

> "इन आयात या इसी मफ़्हूम की दूसरी आयतों में जो जदीद लफ़्ज़ क़ाबिल-ए-ग़ौर है वो "नफ़ख़ रूह" (نفخ روح) है बाअज़ का ख़याल है कि ख़ुदा का ये कहना कि हमने "रूह फूंकी" इस बात को ज़ाहिर करता है कि ईसा सिर्फ रूह-अल्लाह थे और उनके कोई बाप ना था। लेकिन ये इस्तिदलाल हद दर्जा ज़ईफ़ है क्योंकि ख़ुदा ने हर इन्सान की पैदाइश का बाइस नफ़ख़ रूह क़रार दिया है जैसा (सूरह सज्दा आयत 7-9 दर्ज है)

خَلْقَ الْاِنْسَانِ مِنْ طِيْنٍ ثُمَّ جَعَلَ نَسْلَهٗ مِنْ سُلٰلَةٍ مِّنْ مَّآءٍ مَّهِيْنٍ ثُمَّ سَوّٰىهُ وَنَفَخَ فِيْهِ مِنْ رُّوْحِهٖ

इलावा अज़ीं इस के (सूरह अम्बिया की आयत 91) से भी जो ऊपर दर्ज की गई है। ये बात ज़ाहिर होती है कि मर्यम शौहर वाली थीं। क्योंकि इस में लफ़्ज़ (اَحْصَنَتْ) इस्तिमाल किया गया है। यानी आपको मुह्सिना बयान किया गया है और मुह्सिना उस अफ़ीफ़ा को कहते हैं, "जो शौहर रखती हो।" कुँवारी को अरबी ज़बान में मुह्सिना नहीं कहते हैं। इस आयत में जो मर्यम के मुताल्लिक़ ज़ाहिर किया गया है कि उन्होंने अपनी इस्मत की हिफ़ाज़त की तो इस से ये मक़्सूद है कि उन्होंने सिवाए अपने शौहर के और मर्दों से अहितराज़ किया ना ये कि अपने शौहर से भी। चूँकि बाअज़ यहूदी आप पर ज़िना की तोहमत रखते थे इसलिए ख़ुदा ने कलाम मजीद में उनकी इफ़्फ़त (पाक-दामनी) की शहादत दी। यहां एक नुक्ता और क़ाबिल-ए-ग़ौर है वो ये कि यहूदीयों ने ज़िना की तोहमत यूसुफ़ नज्जार (बढ़ई) के साथ कभी नहीं लगाई बल्कि एक और शख़्स पंथरानाली (?) के साथ मन्सूब की थी। इस से भी मालूम होता है कि यूसुफ़ नज्जार का शौहर होना इस वक़्त सबको मालूम था और उस के साथ तोहमत नहीं लगा सकते थे।"

आयते माफ़ोक़ में जो जुम्ला सबसे ज़्यादा क़ाबिल-ए-ग़ौर व लायक बह्स था वो ये है कि, وَجَعَلْنٰهَا وَ ابْنَهَاۤ اٰيَةً لِّلْعٰلَمِيْنَ लेकिन अफ़्सोस है कि ना तो सर सय्यद मर्हूम को इस पर बह्स करने की जुर्आत हुई और ना हमारे करम फ़र्मा को और ना उनके दीगर ज़वी-उल-मवाखिज़ को। क़ब्ल इस के कि मैं इस पर बह्स करूँ मुनासिब मालूम होता है कि हज़रत नियाज़ की दो गलतीयां जो इबारत बाला में ज़ाहिर की गई हैं बे-नक़ाब करूँ।

पहली ग़लती

आपकी पहली ग़लती ये है कि आप इन्सान की पैदाइश का बाइस नफ़ख़ रूह (रूह फूंकना) बतलाते हैं। और आयत خَلْقَ الْاِنْسَانِ (आखिर तक...) से इस पर दलील पेश करते हैं। हालाँकि इस आयत में इन्सान की पैदाइश की इल्लत (वजह) طِيْنٍ (मिट्टी) और उस की नस्ल की पैदाइश की इल्लत (वजह) مَّآءٍ مَّهِيْنٍ (नुत्फ़ा) बयान की गई है। और نَفَخَ رُّوْحِهٖ का वाक़िया इस के तसवीह (बराबर करना, सिधा करना, ठीक करना) के बाद बयान किया गया है। अफ़्सोस तो ये है कि आप अरबी नहीं जानते हैं इसलिए आपसे बार-बार लग़्ज़िश होती है। इस आयत में ثُمَّ हर्फ-ए-अतफ़ है जो तराज़ी (रजामंदी, ख़ुश होना) और मोहलत के लिए मख़्सूस है। यानी इन्सान की तख़्लीक़ के कुछ देर बाद "इस में अपनी रूह फूंकी" सर सय्यद मर्हूम चूँकि अरबी दान और इस नुक्ते से वाक़िफ़ थे इसलिए उन्होंने इस आयत से इस पर इस्तिदलाल किया है कि **तमाम इन्सानों की निस्बत ख़ुदा-ए-तआला ने नफ़ख़ रूह कहा है। (तफ़्सीर-उल-क़ुर्आन सूरह इमरान सफ़ा 43)** काश कि आप सर सय्यद मर्हूम की इस इबारत को बलफ्ज़ नक़्ल करने पर इक्तिफ़ा زیراکہ پیدائش چیزے دیگراست ونفخ روح چیزے دیگر यानी पैदा होना और है और रूह का फूंकना और।

दूसरी ग़लती

आपकी दूसरी ग़लती लफ़्ज़ "मुह्सिना" (محصنہ) की तारीफ़ है आप लिखते हैं कि "मुह्सिना उस अफ़ीफ़ा को कहते हैं जो शौहर रखती हो।" (आखिर तक..) जो सरासर ग़लत बल्कि अल-ग़लत है। मैं बार-बार गुज़ारिश कर चुका हूँ कि आप अरबी नहीं जानते हैं नाहक़ इस वादी पुर ख़ार (कांटों से भरी) में पाबरहना (नंगे-पाँव) सर गर्दान फिरते हैं। आपके उस्ताद-ए-अज़ल यानी सर सय्यद मर्हूम भी बहवाला तफ़्सीर कबीर इस का इतलाक़ ज़न-ए-शौहर दार व ज़न बे शौहर दोनो तस्लीम करते हैं (देखो तफ़्सीर-उल-क़ुर्आन सूरह आले-इमरान सफ़ा 23, 24) नीज़ (क़ामूस मुंतहा अल-अरब व सराह) में भी इस के मअनी ये लिखे हैं कि "ज़न पार्सा या शौहरदार।" وامراۃ حصان کسحاب عفیفتہ اومتزوجہ "यानी हिसान उस औरत की सिफ़त होती है जो पार्सा हो या शादीशुदा हो।" ये तो तोसीफ़ी मअनी हुए। और इस के फ़अली मअनी हिफ़ाज़त करने के होते हैं। मसलन اَحْصَنَتْ فَرْجَهَا मर्यम ने अपनी शर्मगाह की हिफ़ाज़त की पस फ़अली मअनी में भी इस का अस्ना व ज़न-ए-शौहरदार बे शौहरदार व बे शौहर दोनो की तरफ़ होता है। पस आपका ये कहना कि "कुँवारी को अरबी ज़बान में मुह्सिना

नहीं कहते हैं" बिल्कुल ग़लत है। बाक़ी रहा ये कि मर्यम सिद्दीक़ा शौहरदार थीं या नहीं इस पर हम औराक़ गुज़श्ता में बित्तफ़सील बहस कर चुके हैं, जिसके इआदे (दोहराने) की यहां ज़रूरत नहीं है। हाँ जनाब का ये कहना कि "बाअज़ यहूदी आप पर ज़िना की तोहमत रखते थे।" (आखिर तक..) बल्कि एक और शख़्स पन्थ्रानाली के साथ मन्सूब की थी गोज़-ए-शुत्र (बे-बुनियाद, बे-असर, बेहूदा) से कम नहीं है। जब आप उस को किसी मुस्तनद तारीख़ी हवाले से साबित करेंगे उस वक़्त मैं इस हक़ीक़त को भी बे-नक़ाब करने के लिए तैयार हूँगा।

अब मैं अपने मुहतरम मुख़ातिब और आपके मजुमला हम-ख़याल से पूछता हूँ कि आयत माफ़ौक़ में وَجَعَلْنٰهَا وَابْنَهَآ اٰيَةً لِّلْعٰلَمِيْنَ "और किया इस को और उस के बेटे को हमने निशानी जहान वालों के लिए।" हज़रत ईसा अलैहि सलातो वस्सलाम तो बेशक ब-वजह रिसालत व ताअलीम मोअजज़ात आयतु-लिल-आलमीन हो सकते हैं। लेकिन मर्यम सिद्दीक़ा के आयतु-लिल-आलमीन होने की क्या वजह है? बजुज़ इस के और कोई वजह नहीं कि ख़ुदा की क़ुद्रत से आप बिला मसास-ए-बशरी (बगैर किसी इंसान के छुए) हामिला हुईं और हज़रत ईसा अलैहिस्सलाम आपके बतन मुबारक से बग़ैर बाप के पैदा हुए। ये एक ऐसी निशानी है जिसकी मिस्ल दुनिया में नहीं मिल सकती है।

हज़रत ईसा के बग़ैर बाप के पैदा होने का पांचवां सबूत وَّ بَرًّا بِوَالِدَتِيْ

हमारे मेहरबान हज़रत नियाज़ तहरीर फ़रमाने हैं कि :-

> "बाअज़ लोग ये भी कहते हैं कि कलाम मजीद में हर जगह ईसा को इब्ने मर्यम कहा गया है उन के बाप का नाम किसी जगह दर्ज नहीं जिससे मालूम होता है कि वो बिन बाप के पैदा हुए। लेकिन ये इस्तिदलाल ग़लत है क्योंकि कलाम मजीद जब नाज़िल हुआ तो ईसा उस वक़्त इब्ने मर्यम ही की कुनिय्यत से मशहूर थे और इसी लिए मुख़ातिबत में इस लफ़्ज़ को क़ायम रखा इलावा इस के मगर कलाम मजीद में किसी के बाप के ज़िक्र का ना होना इस अम्र की दलील हो कि उस के बाप ही ना था तो मूसा को भी बिन बाप के

> मानना पड़ेगा क्योंकि उन की पैदाइश के ज़िक्र में भी उन के बाप का नाम नहीं लिया गया।"

यूं तो हर एक शख़्स को इख़्तियार है कि जो चाहे सो लिखे लेकिन आप जैसे मुहक़्क़िक़ और क़ुर्आन फ़हम शख़्स को ये ज़ेब नहीं देता है कि बग़ैर सोचे समझे सब कुछ क़लम के हवाले करे। आपका ये कहना कि "कलाम मजीद जब नाज़िल हुआ तो ईसा उस वक़्त इब्ने मर्यम ही की कुनिय्यत से मशहूर थे।" बिल्कुल बे-बुनियाद है। हज़रत ईसा अलैहि सलातो वस्सलाम बजुज़ "इब्ने-आदम" के और किसी कुनिय्यत से मशहूर ना थे। (देखो अनाजील अरबा) नीज़ आपका ये फ़रमाना भी ग़लत है कि "मूसा की पैदाइश के ज़िक्र में भी उनके बाप का नाम नहीं लिया गया।" क्योंकि क़ुर्आन मजीद में सिर्फ हज़रत मूसा के बाप का नाम मौजूद है देखिए आपके मुक़्तदा सर सय्यद मर्हूम अपनी तफ़्सीर में क्या लिखते हैं कि :-

> "तो कुछ शुब्हा नहीं रहता कि इस मुक़ाम पर इमरान से मूसा व हारून के बाप मुराद हैं।"

(तफ़्सीर-उल-क़ुर्आन आयत 30 सूरह आले-इमरान)

लेकिन हज़रत ईसा के बाप का नाम ना तो उनकी पैदाइश के ज़िक्र में और ना पैदाइश के बाद के अज़कार (ज़िक्र की जमा) में लिया गया है जिससे साफ़ साबित है कि आप बग़ैर बाप के पैदा हुए थे।

ख़ैर जाने दीजिए कि हज़रत मूसा के बाप का नाम क़ुर्आन मजीद में मौजूद है या नहीं। लेकिन इस आयत का आपके पास क्या जवाब है कि :-

وَّبَرًّا بِوَالِدَتِيْ وَلَمْ يَجْعَلْنِيْ جَبَّارًا شَقِيًّا (सूरह मर्यम आयत 32) हज़रत ईसा का अगर बाप होता तो उनको ये कहना चाहिए था कि, وَّبَرًّا بِوَالِدَتِيْ चुनान्चे क़ुर्आन मजीद में यही अल्फ़ाज़ हज़रत यहया के मुताल्लिक़ भी आए हैं लेकिन इस तरह कि وَّبَرًّا بِوَالِدَيْهِ जिससे मालूम होता है कि हज़रत यहया के वालिद भी थे। पस अगर हज़रत ईसा का बाप होता तो ज़रूर था कि वो आयत माफ़ौक़ में उनका भी ज़िक्र करते क्योंकि अदम ज़िक्र से ये लाज़िम आता है कि हज़रत ईसा का सुलूक अपने वालिद के साथ अच्छा ना था और यह उनकी शान-ए-रिसालत के बरख़िलाफ़ है, लेकिन चूँकि वो बग़ैर वालिद के पैदा हुए थे इसलिए उन का ज़िक्र नहीं किया।

चूँकि हज़रत नियाज़ के मुताल्लिक़ मेरा ये गुमान है कि आप निहायत लायक़ और फ़ाइक़ हैं इसलिए सबूत हाय माफ़ौक़ को हमने निहायत इख़्तिसार के साथ पेश किया है। वर्ना क़ुर्आन मजीद की उन आयात में जिनमें हज़रत ईसा की पैदाइश का ज़िक्र है वो हक़ाइक़ व माअ़रूफ़ भरे हुए हैं जिनकी तफ़्सील के लिए एक ज़ख़ीम किताब की ज़रूरत है।

हर्फ़ ف व लफ्ज़ كان पर बहस और हज़रत नियाज़ के मुतज़ाद अक़्वाल

सिलसिला मज़्मून को जारी रखते हुए हज़रत नियाज़ तहरीर फ़र्माते हैं कि :-

"आप सूरह मर्यम की आयतों पर ग़ौर कीजिए :-
(सूरह मर्यम आयत 16) اِذِ انْتَبَذَتْ مِنْ اَهْلِهَا مَكَانًا شَرْقِيًّا मकान शर्क़ी से मुराद हज़रत मर्यम की ख़्वाबगाह है य उन की इबादत की जगह जहां बहालते ख्वाब उनको फ़रिश्ता नज़र आया और उस से वही गुफ़्तगु हुई जिसका ज़िक्र सूरह आले-इमरान में भी मौजूद है। ताहम एक और हवाला क़ाबिल-ए-ज़िक्र है, (सूरह मर्यम आयत 21) وَلِنَجْعَلَهٗۤ اٰيَةً لِّلنَّاسِ وَرَحْمَةً مِّنَّا के अल्फ़ाज़ भी इस्तिमाल हुए हैं। लेकिन इनका ताल्लुक़ हज़रत ईसा की आइन्दा ज़िंदगी और नबुव्वत से है ना कि विलादत व तरीक़-ए-विलादत से।

इस के बाद मर्यम के हामिला होने का और उनके चले जाने का ज़िक्र इन अल्फ़ाज़ में है, (सूरह मर्यम आयत 22) فَحَمَلَتْهُ فَانْتَبَذَتْ بِهٖ مَكَانًا قَصِيًّا जब क़ुर्आन मजीद में कोई क़िस्सा या वाक़िया बयान किया जाता है तो दर्मियान की ग़ैर-ज़रूरी कड़ियाँ छोड़कर ख़ास ख़ास बातों का ज़िक्र किया जाता है, लेकिन बाअज़ लोग इस हक़ीक़त को नज़र-अंदाज करके ये समझते हैं कि जिस तरह वाक़ियात बयान हुए हैं वो सब मुसलसल और फ़ौरन वक़ूअ में आए हैं। सूरह मर्यम में पहले

मर्यम का फ़रिश्ते को देखना, बयान हुआ है और इस के बाद ही हामिला होने, वज़ा हमल की तकालीफ़ में मुब्तला होने, ईसा को अपनी क़ौम के पास लाने और ईसा का लोगों से गुफ़्तगु करने के वाक़ियात बयान हुए हैं। लेकिन ये तमाम जुम्ले "फ" (ف) से शुरू किए गए हैं जिससे तर्तीब वाक़ियात तो ज़रूर ज़ाहिर होती है लेकिन कुर्ब ज़मानी से इस को कोई वास्ता नहीं है। बाअज़ लोग ग़लती से ये समझते हैं कि ये तमाम वाक़ियात फ़ौरन हो गए यानी फ़रिश्ते का आना, मर्यम का हामिला होना, वज़ा हमल हो जाना और मसीह का बोलना ये सब एक ही साअत या दिन में हो गया। हालाँकि मक़्सूद सिर्फ वाक़ियात को इस तर्तीब से ज़ाहिर करना है ना ये कि वो फ़ौरन वक़ूअ में आ गए।

सूरह मर्यम की आयात पर ग़ौर करने से मालूम होता है कि मर्यम हामिला होने के बाद किसी दूर जगह चली गईं और तहक़ीक़ से मालूम होता है कि वो जगह नासिरा थी या मिस्र जहां वो अपने निस्बती शौहर यूसुफ़ नज्जार के साथ तशरीफ़ ले गईं। इस के बाद आयत فَأَجَاءَهَا الْمَخَاضُ से शुरू होती है। इस से साबित होता है कि वज़ा हमल जंगल में किसी बुलंद मुक़ाम पर हुआ। जब कि मर्यम हालत-ए-सफ़र में थीं और वज़ा हमल की तमाम वो तकालीफ़ आप पर तारी हुईं जो आम तौर पर ज़ाहिर होती हैं। ये गोया दूसरा सबूत इस अम्र का है कि हज़रत ईसा की विलादत इसी तरह हुई जिस तरह आम तौर पर तमाम बच्चों की होती है। फिर दो आयतें जिनमें हज़रत मर्यम का ईसा को अपनी क़ौम के पास लाना वग़ैरह बयान हुआ है। और इन में बाअज़ लफ़्ज़ तो ज़रूर गौरतलब हैं। हम उनको मुकर्रर दर्ज करते हैं। (सूरह मर्यम 27 ता 30)

فَأَتَتْ بِهِ قَوْمَهَا تَحْمِلُهُ ۖ قَالُوا يَا مَرْيَمُ لَقَدْ جِئْتِ شَيْئًا فَرِيًّا يَا أُخْتَ هَارُونَ مَا كَانَ أَبُوكِ امْرَأَ سَوْءٍ وَمَا كَانَتْ أُمُّكِ بَغِيًّا فَأَشَارَتْ إِلَيْهِ ۖ

قَالُوْا كَيْفَ نُكَلِّمُ مَنْ كَانَ فِي الْمَهْدِ صَبِيًّا قَالَ اِنِّيْ عَبْدُ اللهِ اٰتٰنِيَ الْكِتٰبَ وَجَعَلَنِيْ نَبِيًّا۔

इन आयात का मफ़्हूम ये है कि जब मर्यम हज़रत ईसा को लेकर अपनी क़ौम के पास आईं तो उन्होंने कहा ऐ मर्यम ये तुम अजीब चीज़ लेकर आई हो हालाँकि ना तुम्हारा बाप बुरा था। और ना तुम्हारी माँ ख़राब थी। ये सुनकर उन्होंने हज़रत ईसा की तरफ़ इशारा किया कि इसी से पूछो। इस पर लोगों ने कहा कि हम इस से क्या बात करें जो गहवारे का बच्चा था। इस पर ईसा ने कहा मैं अल्लाह का बंदा हूँ मुझे किताब दी गई है और मैं नबी बनाया गया हूँ वग़ैरह-वग़ैरह।

गौर-तलब अम्र ये है कि क़ौम ने क्यों कहा कि तुम अजीब चीज़ ले कर आई हो। और क्यों मर्यम के बाप के मुताल्लिक़ ये कहा कि वो ख़राब ना थे इसी के साथ मर्यम का ईसा की तरफ़ इशारा करना और क़ौम का ये कहना कि हम बच्चे से क्या बात करें और फिर हज़रत ईसा का गुफ़्तगु करना इन तमाम बातों की क्या अस्लियत है? आम तौर पर इन आयात का मफ़्हूम ये लिया जाता है कि बच्चा पैदा होते ही मर्यम उस को क़ौम के पास ले आईं और चूँकि मर्यम की शादी किसी से ना हुई थी। इसलिए उनको बच्चा पैदा होने पर ताज्जुब हुआ और उन्होंने मर्यम पर ये इल्ज़ाम लगाया कि तुम्हारे माँ बाप तो ऐसे ना थे। ये तुमने क्या हरकत की कि नाजायज़ बच्चा पैदा हुआ। लेकिन हज़रत ईसा ने वहीं गोदिया गहवारे से क़ौम को मुख़ातिब किया जो उनका एक मोअजिज़ा था। लेकिन हक़ीक़त ये नहीं है बल्कि ख़ुद इन्हीं आयात से मालूम होता है कि हज़रत ईसा जब अपनी क़ौम के पास लाए गए तो बच्चे ना थे और ना मर्यम पर लोगों ने नाजायज़ मौलूद पैदा करने का इल्ज़ाम लगाया था।

वो लोग जो ये बयान करते हैं कि कि मर्यम उन (ईसा) को बिल्कुल हालत-ए-तिफ़्ली या शीरख़्वारगी (बचपन) में लाईं वो सबूत में लफ़्ज़ تَحْمِلُهٗ को पेश करते हैं यानी मर्यम हज़रत ईसा को लाईं इस हाल में कि वो उन्हें उठाए हुए थीं या गोद में लिए हुए थीं। ऐसा समझना ग़लती है क्योंकि ख़ुद कलाम मजीद में दूसरी जगह यही लफ़्ज़ है और वहां गोद में लेने की मअनी नहीं हैं बल्कि किसी सवारी पर ले जाने के हैं। मुलाहिज़ा हो (सूरह तौबा आयत 93)

وَّلَا عَلَى الَّذِيْنَ اِذَا مَآ اَتَوْكَ لِتَحْمِلَهُمْ قُلْتَ لَآ اَجِدُ مَآ اَحْمِلُكُمْ عَلَيْهِ

इसलिए यहां भी ये मअनी हुए कि मर्यम हज़रत ईसा को सवारी पर लाईं। इलावा इस के जो गुफ़्तगु हज़रत ईसा ने की है इस से मालूम होता है कि ये वो ज़माना था जब हज़रत ईसा पैग़म्बर हो चुके थे और उन को किताब इलाही मिल चुकी थी। और ये अम्र ज़ाहिर है आपको नबुव्वत तीस (30) साल की उम्र में मिली है। इसी के साथ क़ौम का ये कहना कि इस से क्या बात करें जो गहवारे में बच्चा था यानी उन्होंने लफ़्ज़ كَانَ का इस्तिमाल किया है जिससे ज़माना माज़ी ज़ाहिर होता है। ना ये कि वो फ़िलहाल गहवारे के बच्चे हैं। इस से भी ज़ाहिर होता है कि उस वक़्त हज़रत ईसा बच्चे ना थे।

अब रहा ये अम्र कि क़ौम का मर्यम से कहना कि तुम अजीब चीज़ लाई हो। और यह कि तुम्हारे माँ बाप ख़राब ना थे सो इस से ये साबित नहीं होता कि कि उन पर नाजायज़ मौलूद (बच्चा) पैदा करने का इल्ज़ाम लगाया था। और उन का कोई शौहर ना था। चूँकि हज़रत ईसा यहूदीयों के अक़ाइद के ख़िलाफ़ तल्क़ीन करते थे इसलिए उन्होंने लफ़्ज़ فَرِيًّا इस्तिमाल किया जिसके मअनी ऐसे शख़्स के हैं जो अजीबो-गरीब बातें करे या दिखाए। यानी उन्होंने कहा कि ऐ मर्यम ये

> कैसा बेटा तुमने जना है जो हमारे मोअतक़िदात की इस क़द्र तौहीन करता है हालाँकि तुम्हारे माँ बाप तो ऐसे ना थे।
>
> ये सुनकर मर्यम ने कहा कि इसी से पूछो जिस पर अहले-क़ौम ने कहा कि हम इस से क्या बात करें जो कल गहवारे में खेलता था। इस से मक़्सूद गोया ईसा की तौहीन थी और उन की ना तजुर्बेकारी को ज़ाहिर करना। इस के जवाब में जो कुछ ईसा ने कहा वो क़तई सबूत इस अम्र का है कि लोगों ने मर्यम पर ज़िना की तोहमत नहीं लगाई और ना हज़रत ईसा बिन बाप के पैदा हुए। क्योंकि हज़रत ईसा ने जो कुछ जवाब में कहा है उस में कहीं अपनी माँ की बरात (इल्ज़ाम के रद्द) का ज़िक्र नहीं है। वर्ना ये इल्ज़ाम लगाया गया होता और क़ौम ये तोहमत मर्यम पर रखती तो इस के मुताल्लिक़ भी आप कुछ कहते। लेकिन आपने कहीं इस का ज़िक्र नहीं किया। हक़ीक़त ये है कि इस वक़्त सबको ईसा की वलदीयत (बाप) का पूरा इल्म था। और यूसुफ़ नज्जार के साथ मर्यम के मन्सूब होने को सब जानते थे इसलिए वो तोहमत रख ही नहीं सकते थे और इसी बिना पर हज़रत ईसा को अपनी माँ की बरात और अपनी विलादत के मुताल्लिक़ किसी बयान के पेश करने की ज़रूरत लाहक़ ही नहीं हुई।"

अगरचे इबारत बाला में कोई ऐसी अहम बात नहीं है जिसका जवाब हम ना दे चुके हों लेकिन इस में दो एक बातें ऐसी हैं कि अगर हम उन पर कुछ ना लिखें तो मुम्किन है कि कुछ ग़लतफ़हमी पैदा हो जाए। आप सबसे पहले सर सय्यद मर्हूम की तबइयत में हर्फ़ "फ" (ف) पर बहस करते हुए फ़र्माते हैं कि "इस से तर्तीब वाक़ियात तो ज़रूर ज़ाहिर होती है लेकिन क़ुर्ब-ए-ज़मानी से इस को कोई वास्ता नहीं है।" इस से आपको ये साबित करना मक़्सूद है कि फ़रिश्ते के बशारत देते ही मर्यम सिद्दीक़ा हामिला नहीं हुईं बल्कि उस के बाद निकाह हुआ और निकाह के बाद हामिला हुईं। हमारे दोस्त को इतना भी इल्म नहीं है कि अगर ये "फ" (ف) तर्तीबी व तअसबी है तो इस में "क़ुर्ब-ए-ज़मानी" का होना फ़र्ज़ है। अल्लामा रज़ी शरह क़ाफ़िया में इस पर बहस करते हुए साफ़ लिखते हैं कि :-

"फ़ाए (فائے) तर्तीबी में इत्तिसाल-ए-ज़मानी का होना बेहद ज़रूरी है।"

चुनान्चे लिखते हैं कि :-

فمعنی قولك قام زید فعمرو حصل قیا مه عمرو عقیب قیامه زید بلافصل ومعنی ضربت زیداً فعمراً وقع المضرب علی عمر وعلیب وقوعه علی زید کذالك

तर्जुमा : "यानी जब कोई शख़्स ये कहता है कि قامه زید فعمرو ۔ وضربت زیداً فعمراً तो इस के ये मअनी होते हैं कि ज़ैद के खड़े होने के बाद ही बिला-फ़स्ल उमरू का खड़ा होना हासिल हुआ। इसी तरह ज़ैद के मारने के बाद ही बिला-फस्ल उमरू पर मार पड़ी।"

क़िब्ला ! जैसे बार-बार अर्ज़ कर चुका हूँ फिर अर्ज़ करता हूँ कि दर-हक़ीक़त आपको अरबी से कुछ भी मस नहीं है। मगर आप अरबी से वाक़िफ़ होते तो आपको ये भी मालूम होता है कि अरबी में एक और हर्फ-ए-अतफ़ ثُمَّ है जो तर्तीब बिल-तराख़ी के लिए मख़्सूस है। पस अगर क़ुर्ब-ए-ज़मानी का लिहाज़ ना होता तो बजाए "फ" (ف) के हर जुम्ले के शुरू में सुम्मा (ثُمَّ) लाना वाजिब था और आयात ज़ेर-ए-बहस की सूरत यूं हो जाती कि (सूरह मर्यम आयत 22)

ثُمَّ فَحَمَلَتْهُ ثُمَّ فَانْتَبَذَتْ بِهٖ مَكَانًا قَصِيًّا الخ

अब दूसरा अम्र जिस पर बहस करना बाक़ी है वो लफ़्ज़ كَانَ है जिसके मुताल्लिक़ हमारे मुहतरम फ़र्माते हैं कि उन्होंने लफ़्ज़ كَانَ इस्तिमाल किया है जिससे ज़माना माज़ी ज़ाहिर होता है ना ये कि फ़िलहाल गहवारे के बच्चे हैं। क़ब्ल इसके कि मैं अपने करम फ़र्मा को ये बतला दूं कि इस आयत में लफ़्ज़ كَانَ माज़ी के लिए इस्तिमाल नहीं हुआ। ये बतलाना मुनासिब समझता हूँ कि कलाम-ए-अरब में और नीज़ ख़ुद क़ुर्आन मजीद में ये लफ़्ज़ मुख़्तलिफ़ माअनों में इस्तिमाल हुआ है। मसलन क़ौले तआला (1) (सूरह बक़रह आयत 172) اِنَّ اللّٰهَ غَفُوْرٌ رَّحِيْمٌ (2) (सूरह

बक़रह आयत 280) وَإِنْ كَانَ ذُو عُسْرَةٍ فَنَظِرَةٌ إِلَىٰ مَيْسَرَةٍ ۚ व क़ौले तआला (3) لمن كان له قلب ۔ وغيره ذالك अब अगर इन आयात में كَانَ का तर्जुमा ब-सिगा माज़ी किया जाये तो इनके तर्जुमे बिल-तर्तीब यूं होंगे (1) ख़ुदा ग़फ़ूरू-रहीम था (2) अगर एक शख़्स तंगी में था तो कुशाइश (कुशादगी) तक उस को फ़ुर्सत देनी चाहिए। (3) सोचने की जगह है वास्ते उस के जिसके अंदर दिल था। देखिए كَانَ का तर्जुमा माज़ी में करने से क़ुर्आन मजीद के मुतालिब कुछ से कुछ हो गए। नहीं जनाब बल्कि मज़हका-ख़ेज़ (मजाक) बन गए। पस आयात बाला में लफ़्ज़ كَانَ का सही तर्जुमा "है" है। (1) ख़ुदा ग़फ़ूर व रहीम है। (2) एक शख़्स तंगी में है तो कुशाइश तक उस को फ़ुर्सत देनी चाहिए। (3) सोचने की जगह है वास्ते उस के जिसके अंदर दिल है।" बईना यही हाल है। (सूरह मर्यम 29 आयत) مَنْ كَانَ فِي الْمَهْدِ صَبِيًّا अगर इस आयत में كَانَ का तर्जुमा था से करें तो एक अहमक़ाना जुम्ला बनता है। मसलन एक शख़्स आकर ज़ैद से ये कहता है कि उमरू से जाकर पूछो। ज़ैद कहता है कि में क्यूँ-कर उमरू से पूछूँ वो तो गहवारे में बच्चा था।" अब वो शख़्स ज़ैद को क्या जवाब देगा। आख़िर यही ना कि तू बड़ा अहमक़ है। उमरू जब बच्चा था तब था अब तो वो बच्चा नहीं है।

अब मैं आपको बतलाता हूँ कि كَانَ क्या है और कितने माअनों में मुस्तअमल होता है और आयत ज़ेर-ए-बहस में इस की क्या हैसियत है। كَانَ अफ़आल नाक़िसा में से एक फ़ेअल है जो अपने इस्म की ख़बर को ज़माना माज़ी में साबित करता है। ये ख़बर कभी दाइमी होती है और कभी ग़ैर दाइमी। और कभी सिर्फ फ़ाइल पर तमाम होता है इस सूरत में इस को ताम्मा (तमाम) कहते हैं। और कभी ज़माना होता है बक़ौल शायर ! سراة بنی ابی بکر تساطی۔ علی کان الموسومته العراب अल्लामा रज़ी ने كَانَ ज़ायद के लिए इसी आयत में ज़ेर-ए-बहस مَنْ كَانَ فِي الْمَهْدِ صَبِيًّا को बतौर दलील के पेश किया है। और मेरे नज़्दीक भी इस आयत में लफ़्ज़ كَانَ ज़ाइद है जो सिर्फ ताकीद के लिए आया है।

हमारे दोस्त ने इबारते बाला में बार-बार इस का इआदा किया है कि "सो इस से ये नहीं साबित होता है कि उन पर नाजायज़ मौलूद (बच्चा) पैदा करने का इल्ज़ाम लगाया गया।" लेकिन इस से क़ब्ल ये लिख चुके हैं कि :-

"बाअज़ यहूदी आप पर ज़िना की तोहमत रखते थे।... बल्कि एक और शख़्स पंथ्राताली के साथ मन्सूब की थी।"

(तफ़्सीर उल-कुर्आन)

अब ना मालूम आपके इन मुतज़ाद अक़्वाल में से किस को सही तस्लीम करें।

इस्लाम और विलादत-ए-मसीह का मसअला

तक़द्दुस मआब जनाब अमीर जमाअत अहमदिया लाहौर जिनकी पैरवी में हज़रत नियाज़ साहब कुर्आन शरीफ़ की खुली ताअलीम से सरासर बेनियाज़ हो गए हैं अपने उर्दू तर्जुमा कुर्आन यानी **"बयान-उल-कुर्आन का फ़ायदा नम्बर 437"** में फ़र्माते हैं कि :-

"ईसाई हज़रत मसीह को बिन बाप मानते हैं और मुसलमान भी उमूमन ऐसा ही मानते हैं।.... अगर फ़िल-वाक़े हज़रत मसीह बिन बाप पैदा हुए तो इस से मुसलमानों के अक़ीदे में ज़र्रा भर फ़र्क़ नहीं आता क्योंकि उनको बिन बाप पैदा शूदा मानना उनके अक़ाइद में दाख़िल नहीं। लेकिन ईसाईयत की बुनियाद ही उखड़ जाती है कि अगर ये साबित ना हो सके कि वो बिन बाप पैदा हुए थे। हज़रत मसीह का बिन बाप पैदा ना होना ईसाईयत को बेख़ व बिन (जड़ से उखाड़) देता है और इस्लाम का इस से कुछ नहीं बिगड़ता। एक मुसलमान हज़रत मसीह की नबुव्वत का इस सूरत में भी क़ाइल है कि वो बिन बाप पैदा हुए हों और इस सूरत में भी कि बिन बाप पैदा ना हुए हों। हज़रत ईसा को बाप वाला या बिन बाप मानने से हमारे दीनी एतिक़ादात या हमारे अमल पर क़तअन कोई असर नहीं होता।"

(बयान-उल-कुर्आन का फ़ायदा सफ़ा 14, 313)

दायरे इस्लाम से ख़ारिज

तक़द्दुस मआब और आप के हम मशरबों को तो ईसाईयत से यहां तक ज़िद है कि उसे बेख़ व बिन (जड़) से उखाड़ने की धुन में इस्लाम पर भी हाथ साफ़ किए देते हैं और नेचरी इस्लाम की हिमायत का यहां तक पास है कि बिना-बर-फ़त्वा मिर्ज़ा गुलाम अहमद साहब क़ादियानी दायरे इस्लाम से भी ख़ारिज होने को तैयार हैं। सुनिए वो फ़र्माते हैं कि :-

> "जो ये दावा करता है कि मसीह का बाप था वो बड़ी ग़लती पर है। हम ऐसे आदमी को दायरे इस्लाम से ख़ारिज समझते।"

इस से में तो यही समझता हूँ कि जिस क़िस्म के इस्लाम की हिमायत या इस्लाम की जिस क़िस्म की हिमायत आप करना चाहते हैं दायरे इस्लाम से ख़ारिज होना उस के लिए ज़रूरी शर्त है।

अब आईए कि मैं आपको आपके इमाम-उल-इमाम हज़रत मिर्ज़ा गुलाम अहमद साहब ग़फ़ुर-अल्लाह ज़नुबा का अक़ीदा इस बारे में सुनाऊँ। (तशहीज़-उल-अज़हान जिल्द दहुम) नम्बर अव्वल मजरिया जनवरी 1915 ई॰ में एक मुसलमान के उस एतराज़ के जवाब में जो "इज़ाला ऊहाम के सफ़ा 303" पर किया है इस के ऐडीटर साहब लिखते हैं कि :-

> "मैंने सफ़ा 303 बग़ौर देखा है इस में मुतल्लिक़न ये अल्फ़ाज़ नहीं जो इस से दियानतदार मुफ़्ती ने नक़्ल किए हैं अलबत्ता ये अल्फ़ाज़ हैं (क्योंकि हज़रत मसीह बिन मर्यम अपने बाप यूसुफ़ के साथ बाईस (22) बरस की मुद्दत तक नज्जारी का काम करते रहे)
>
> इस इबारत में बाप का लफ़्ज़ बतौर मजाज़ उर्फ़-ए-आम इस्तिमाल हुआ है। इस का सबूत ये है कि हज़रत मसीह मौऊद ने मसीह का बे बाप पैदा होना अपने अक़ाइद में लिखा है। पस वो मुहकम है और जो उस के ख़िलाफ़ कहीं से इशारा मिले, वो मुतशाबेह के हुक्म में है और अहले हक़ का ये क़ायदा है कि मुशाबेह को हुक्म के ताबे करते हैं हाँ जिन के

दिलों में ज़ेग़ है वो मुतशाबेह को उड़ा लेते हैं। और मुहक्कम को पसे पुश्त डाल देते हैं।

فَاَمَّا الَّذِيْنَ فِيْ قُلُوْبِهِمْ زَيْغٌ فَيَتَّبِعُوْنَ مَا تَشَابَهَ مِنْهُ ابْتِغَآءَ الْفِتْنَةِ وَ ابْتِغَآءَ تَاْوِيْلِهٖ (सूरह आले-इमरान 7) अब हज़रत मसीह मौऊद का मुहक्कम बयान पढ़िए जो मुवाहिब-उल-रहमना सफ़ा 70) से नक़्ल किया जाता है :-

ومن عقائدنان عیسیٰ ویحییٰ قدولد علی طریق خرق العادت "और हमारे अक़ाइद में से ये भी है कि ईसा व यहया ख़रक़-उल-आदत तौर पर पैदा हुए।" फिर इर्शाद होता है :-

فادل مافعل لهذه الارادة هو خلق عیسیٰ من غیراب بقدرة الجرة पस पहला काम जो अल्लाह ने इस इरादे के लिए किया है वो ये है कि ईसा को बग़ैर बाप के अपनी यकता क़ुद्रत से पैदा किया। फिर लिखते हैं :-

وکون عیسیٰ من غیراب وبروالد ولیل علیٰ ماقر پالدلالته القاطعتةً "और ईसा का बग़ैर बाप के पैदा होना निशान है इस पर जो दलालत फ़ातिअ से गुज़रा।" फिर फ़र्माते हैं :-

کان تولد یحییٰ من دون ممن قویٰ البشریه وکذالك تولد عیسیٰ من دون لابً یحییٰ یدون क़वा (قویٰ) बशरीयह के मस के पैदा हुए और इसी तरह ईसा बग़ैर बाप के पैदा हुए।

फिर तंबीया की है :-

یقولون ان عیسیٰ تولد من نطفته من یوسف ابیه ولا یفمون امقیفة من الجهلات कहते हैं कि ईसा यूसुफ़ अपने बाप से पैदा हुआ और हक़ीक़त को जहालत से नहीं समझते हैं (क्या

इस फ़िक़्रह को पढ़ कर भी ये ख़याल दिल में रह सकता है कि जहां हुज़ूर ने इस किताब की तहरीर से दस बारह साल क़ब्ल फ़रमाया कि अपने बाप यूसुफ़ वहां बाप से ये मुराद है कि ईसा यूसुफ़ के नुत्फे से थे और बाप नहीं थे) फिर अख़ीर में बड़े ज़ोर से बयान किया है :-

اقانحن فنومن بکمال قدعواللہ الاعلیٰ۔۔۔۔ فای عجب یاخذ کمہ من خلق عیسیٰ یا فتیان हम अल्लाह की कमाल क़ुद्रत पर ईमान लाते हैं यानी ईसा का बग़ैर बाप के पैदा होना। पस ईसा के बे बाप पैदा होने से तुम्हें ऐ जवानो क्या ताज्जुब है? फिर ईसा का बाप मानने वालों से सख़्त बेज़ारी का इज़्हार फ़र्माते हुए लिखा है :-

والذین یحکرون ھا فما قدر واللہ حق قدرہ जो लोग उस के बे बाप पैदाइश से इन्कार करते हैं उन्होंने अल्लाह की क़द्र को जैसा कि उस का हक़ है नहीं जाना।

ये अरबी इबारत है अब मैं अलहकम 24 जून 1901 ई॰ से मुफ़स्सला ज़ैल अल्फ़ाज़ आपके नक़्ल करता हूँ :-

“हमारा ईमान और एतिक़ाद यही है कि हज़रत मसीह बिन बाप थे और अल्लाह तआला को सब ताक़तें हैं। नेचरी जो ये दावा करता है कि उनका बाप था वो बड़ी ग़लती पर है ऐसे लोगों का ख़ुदा मुर्दा ख़ुदा है ऐसे लोगों की दुआ क़ुबूल नहीं होती जो ये ख़याल करते हैं कि अल्लाह तआला किसी को बे बाप पैदा नहीं कर सकता हम ऐसे आदमी को दायरे इस्लाम से ख़ारिज समझते हैं।”

(तशहीज़-उल-अज्हान)

ये फ़त्वा है उनके हक़ में जो मसीह की बिन बाप पैदाइश के मुन्किर हैं। बताईए अब इस के मुताबिक़ आप दायरे इस्लाम से ख़ारिज होते हैं या ईसाईयत बेख़ व बिन (जड़) से उखड़ती है।

हिस्सा दोम

وَرَافِعُكَ إِلَيَّ

हज़रत नियाज़ इस मज़्मून के दूसरे हिस्से में हज़रत ईसा की वफ़ात या मस्लूब होने पर बहस करते हुए तहरीर फ़र्माते हैं कि :-

> "जिस तरह हज़रत ईसा की विलादत का मसअला अहम है इसी तरह उनकी वफ़ात या मस्लूब होने का भी वाक़िया बहुत गौरतलब है।"

इस मसअले में यहूदीयों, ईसाईयों और मुसलमानों के ख़यालात मुख़्तलिफ़ हैं। यहूदीयों का अक़ीदा है कि वो सलीब पर चढ़ा कर क़त्ल किए गए। ईसाई कहते हैं कि वो मस्लूब होने के बाद फिर ज़िंदा करके आस्मान पर उठा लिए गए। और मुसलमान कहते हैं कि सलीब पर नहीं चढ़ाए गए। बल्कि कोई और शख़्स उनकी जगह मस्लूब हुआ लेकिन आस्मान पर चले जाने के ये भी क़ाइल हैं। कलाम मजीद की जिन आयतों से इस पर इस्तिदलाल किया जाता है ये हैं :-

اِذْ قَالَ اللّٰهُ يٰعِيْسٰٓى اِنِّيْ مُتَوَفِّيْكَ وَ رَافِعُكَ اِلَيَّ وَ مُطَهِّرُكَ مِنَ الَّذِيْنَ كَفَرُوْا

तर्जुमा : "जब अल्लाह ने कहा ऐ ईसा मैं बेशक तुझे मारने वाला हूँ। और उठाने वाला हूँ अपनी तरफ़ और पाक करने वाला हूँ तुझे उनसे जो काफ़िर हुए।" (सूरह आले-इमरान 55)

وَّ قَوْلِهِمْ اِنَّا قَتَلْنَا الْمَسِيْحَ عِيْسَى ابْنَ مَرْيَمَ رَسُوْلَ اللّٰهِ ۚ وَ مَا قَتَلُوْهُ وَ مَا صَلَبُوْهُ وَ لٰكِنْ شُبِّهَ لَهُمْ ؕ وَ اِنَّ الَّذِيْنَ اخْتَلَفُوْا فِيْهِ لَفِيْ شَكٍّ مِّنْهُ ؕ

مَا لَهُمْ بِهٖ مِنْ عِلْمٍ اِلَّا اتِّبَاعَ الظَّنِّ ۚ وَ مَا قَتَلُوْهُ يَقِيْنًا ۢ بَلْ رَّفَعَهُ اللّٰهُ اِلَيْهِ ؕ وَ كَانَ اللّٰهُ عَزِيْزًا حَكِيْمًا

तर्जुमा : "और अल्लाह ने मुहर कर दी है उनके दिलों पर बा सबब उनके ये कहने के हमने क़त्ल कर दिया है मसीह ईसा मर्यम के बेटे अल्लाह के रसूल को और उन्हों ने नहीं क़त्ल किया उस को ना सलीब दी उस को। लेकिन उनको इस का धोका हुआ और जो लोग इस में इख़्तिलाफ़ करते हैं वो बेशक शक में हैं उनका इल्म जो कुछ है सिर्फ ज़न व कियास है और यक़ीनन मसीह को क़त्ल नहीं किया बल्कि अल्लाह ने उठा लिया उस को अपनी तरफ़ और अल्लाह ग़ालिब है हिक्मत वाला।" (सूरह निसा आयत 157 ता 158)

सबसे पहले हम आपके वाक़िया सलीब को लेते हैं। जिसका ज़िक्र निहायत सराहत के साथ (सूरह निसा) में आया है। सूरह निसा की इन आयतों में ज़िक्र है यहूद का जो कहते थे कि हमने मसीह को सलीब पर चढ़ा कर क़त्ल कर डाला। कलाम-ए-मजीद में इस का साफ़ इन्कार किया गया है कि ना उन्होंने मसीह को क़त्ल किया और ना सलीब पर चढ़ाया। लेकिन बहस-तलब अल्फ़ाज़ **شبه لهم** के हैं। जिससे बाअज़ ने ये इस्तिदलाल (सबूत, दलील) किया है कि कोई दूसरा शख़्स मसीह की सूरत में तब्दील हो गया था और उसी को सूली पर चढ़ाया गया। लेकिन इन अल्फ़ाज़ से ये मफ़्हूम अख़ज़ करना निहायत ना-रवा जसारत है। कलाम-ए-मजीद के अल्फ़ाज़ का मफ़्हूम सिर्फ इस क़द्र है कि यहूदी मसीह की मौत या उनके क़त्ल किए जाने के मसअले में धोके में मुब्तला हो गए, यानी वो हलाक हुए नहीं और उन्हें मुर्दा समझ लिया गया। अरबी ज़बान में ये लफ़्ज़ कस्रत से इलतिबास या धोके के मअनी में मुस्तअमल है चुनान्चे आम तौर पर जब किसी शख़्स को किसी बात में धोका हो जाता है तो कहते हैं कि **شبه عليه الامر**। (फ़ुलां अम्र में इस को इलतिबास या धोका हो गया)

इसलिए इस के ये मअनी लेना कि कोई और शख़्स मसीह की शबिया बन गया था दुरुस्त नहीं हो सकता।

अब रहा ये अम्र कि अगर वो सलीब पर चढ़ाए गए थे तो कलामे मजीद में इस की नफ़ी **مَا صَلَبُوْهُ** कह कर की गई है। इस का जवाब निहायत आसान है क़ुर्आन पाक में क़त्ल व सलीब दोनों की नफ़ी साथ-साथ की गई है और यूं इर्शाद हुआ है **مَا قَتَلُوْهُ وَمَا صَلَبُوْهُ** जिसके साफ़ ज़ाहिर है कि **مَا صَلَبُوْهُ** का मफ़्हूम भी वही है जो **مَا قَتَلُوْهُ** का है, यानी उनको सलीब पर चढ़ाने के बाद जो अस्ल मक़्सूद था हासिल नहीं हुआ। और वो हलाक नहीं हुए। इसलिए जब सलीब देने का कोई नतीजा ना निकला तो ये कहना आम मुहावरे के बिल्कुल मुताबिक़ है कि उन्हें सलीब भी नहीं दी गई। जिसकी तस्दीक़ **شُبِّهَ لَهُمْ** से और ज़्यादा होती है। और **شُبِّهَ لَهُمْ** का मफ़्हूम जो हमने बयान किया आगे के अल्फ़ाज़ **مَا لَهُمْ بِهٖ مِنْ عِلْمٍ اِلَّا اتِّبَاعَ الظَّنِّ** से और ज़्यादा मोसिक़ हो जाता है।

इस के बाद सवाल है उनके आस्मान पर उठाए जाने का और जिस के सबूत में **رَافِعُكَ اِلَيَّ** और **رَّفَعَهُ اللّٰهُ اِلَيْهِ** के अल्फ़ाज़ पेश किए जाते हैं। लेकिन यहां रफ़ाअ **رفع** (उठाने) से मुराद रफ़ा जिस्म (जिस्म का उठाना) नहीं है बल्कि रिफ़अत मर्तबत (दर्जे की बुलंदी) मुराद है। जैसा कि मुफ़रिदात इमाम राग़िब व तफ़्सीर कबीर में सराहतन मज़्कूर है। अरबी में रफ़ाअ (*رفع*) के मअनी रफ़ाअ क़द्र के भी आते हैं और रफ़ीअ उस शख़्स को कहते हैं जो मुअज़्ज़िज़ व बुलंद मर्तबत वाला हो।

इस ख़याल की मज़ीद तक़वियत (सूरह आले-इमरान की आयत 55) से भी होती है जहां **رَافِعُكَ اِلَيَّ** के बाद हर्फ़-ए-

अतफ़ के ज़रीये से इस फ़िक़्रह को भी मिला लिया गया है : وَمُطَهِّرُكَ مِنَ الَّذِيْنَ كَفَرُوْا

कहा जाता है कि जब मसीह सलीब पर चढ़ाए गए तो उन्हें आस्मान पर उठा लिया गया और उन की शबिया सलीब पर क़ायम कर दी गई। बाअज़ का ख़याल है कि सलीब तो उन्हीं को दी गई थी लेकिन वो सलीब से मुर्दा समझ कर उतारे गए तो ख़ुदा ने उन्हें ऊपर उठा लिया। अल-ग़र्ज़ आस्मान पर उठाए जाने का वाक़िया सलीब ही के वाक़िये से मुताल्लिक़ ज़ाहिर किया जाता है, हालाँकि क़ुर्आन मजीद में सराहतन اِنِّيْ مُتَوَفِّيْكَ وَرَافِعُكَ اِلَيَّ के अल्फ़ाज़ पाए जाते हैं। जिनसे ज़ाहिर होता है कि रफ़ाअ आस्मान का वाक़िया आपकी वफ़ात के बाद हुआ है। और आपकी वफ़ात सलीब पर हुई नहीं जैसा कि हम अभी कलामे मजीद से साबित कर चुके हैं। इसलिए इन्हिसार फ़ैसले का इस अम्र पर हुआ कि आपकी वफ़ात हुई या नहीं। यानी आपने उम्र तबई को पहुंच कर इंतिक़ाल किया या नहीं। अगर ये साबित हो जाए तो फिर ज़िंदा आस्मान पर उठाए जाने और मफ़्हूम रफ़ाअ की भी वज़ाहत आसानी से हो जाएगी।

लफ़्ज़ मुतवफ़्फ़ी (**متوفی**) का मुसद्दिर तवफ्फी (**توفی**) है और जो मुफ़स्सिरीन हज़रत ईसा के ज़िंदा आस्मान पर उठाए जाने के क़ाइल हैं उन्होंने तवफ्फी (**توفی**) के मअनी इस्तकमाल या वफ़ाई अहद के लिए हैं यानी ख़ुदा ने ईसा से कहा कि मैं तुझसे वफ़ाई अहद करने वाला हूँ। हर चंद तवफ्फी (**توفی**) के ये मअनी भी आते हैं, लेकिन कोई वजह नहीं कि तवफ्फी (**توفی**) के मअनी मारने के ना लिए जाएं जबकि **توفاہ اللہ** के मअनी **اماتہ اللہ** ने मौत तारी के भी आते हैं। इमाम बुख़ारी ने भी इब्ने अब्बास की रिवायत से مُتَوَفِّيْكَ के मअनी **ممیتك** (तुझ पर मौत तारी करने वाले) ज़ाहिर किए हैं ख़ुद कलाम

मजीद भी और मुक़ामात पर लफ़्ज़ तवफ्फी (توفی) मारने के मअनी में आया है। (मुलाहिज़ा सूरह निसा आयत 97)

اِنَّ الَّذِیۡنَ تَوَفّٰىهُمُ الۡمَلٰٓئِكَةُ ۔الخ

(सूरह अनआम आयत 60) وَهُوَ الَّذِىۡ يَتَوَفّٰٮكُمۡ بِالَّيۡلِ ۔الخ

इलावा इस के यूं भी जब कलाम मजीद से निहायत सराहत से ये बात मालूम होती है कि हज़रत ईसा अपनी मौत से मरे और वो उम्र तबई को पहुंचे तो वो مُتَوَفِّيۡكَ के मअनी सिवाए مميتك के कोई और इख़्तियार करना किसी तरह मुनासिब नहीं है।

यूं तो कलाम मजीद की मुख़्तलिफ़ आयतों से हज़रत ईसा की वफ़ात और उनकी सलीबी मौत साबित होती है। लेकिन यहां हम सिर्फ दो आयतें पेश करते हैं जिनमें निहायत सराहत के साथ इस अम्र का इज़्हार है और जिस से किसी को इन्कार नहीं हो सकता है। (सूरह माइदा आयत 116 ता 117)

وَ اِذۡ قَالَ اللّٰهُ يٰعِيۡسَى ابۡنَ مَرۡيَمَ ءَاَنۡتَ قُلۡتَ لِلنَّاسِ اتَّخِذُوۡنِىۡ وَ اُمِّىَ اِلٰهَيۡنِ مِنۡ دُوۡنِ اللّٰهِ‌ ؕ قَالَ سُبۡحٰنَكَ مَا يَكُوۡنُ لِىۡۤ اَنۡ اَقُوۡلَ مَا لَـيۡسَ لِىۡ بِحَقٍّ‌ ؕ اِنۡ كُنۡتُ قُلۡتُهٗ فَقَدۡ عَلِمۡتَهٗ‌ ؕ تَعۡلَمُ مَا فِىۡ نَفۡسِىۡ وَلَاۤ اَعۡلَمُ مَا فِىۡ نَفۡسِكَ‌ ؕ اِنَّكَ اَنۡتَ عَلَّامُ الۡغُيُوۡبِ ﴿۱۱۶﴾ مَا قُلۡتُ لَهُمۡ اِلَّا مَاۤ اَمَرۡتَنِىۡ بِهٖۤ اَنِ اعۡبُدُوا اللّٰهَ رَبِّىۡ وَرَبَّكُمۡ‌ ۚ وَكُنۡتُ عَلَيۡهِمۡ شَهِيۡدًا مَّا دُمۡتُ فِيۡهِمۡ‌ ۚ فَلَمَّا تَوَفَّيۡتَنِىۡ كُنۡتَ اَنۡتَ الرَّقِيۡبَ عَلَيۡهِمۡ‌ ؕ وَاَنۡتَ عَلٰى كُلِّ شَىۡءٍ شَهِيۡدٌ ﴿۱۱۷﴾

तर्जुमा : "जब कहेगा अल्लाह (क़ियामत के दिन) ऐ ईसा मर्यम के बेटे क्या तूने कहा था लोगों से के मुझे और मेरी माँ को ख़ुदा ठहराओ इलावा अल्लाह के ईसा जवाब देगा, पाक है तेरी ज़ात कि मैं क्यूँ-कर ऐसी बात कह सकता था जो हक़

ना थी। और अगर मैंने ऐसा कहा होगा तो तुझे ख़बर होगी क्योंकि जो मेरे जी में है उस का इल्म तुझे है और जो तेरे जी में है उसे मैं नहीं जानता तू ग़ैब की चीज़ों का जानने वाला है। मैंने तो उनसे वही कहा जो तूने हुक्म दिया था, यानी ये कि अल्लाह की परस्तिश करो जो मेरा तुम्हारा सब का परवरदिगार है और इस बात पर मैं उन का गवाह था जब तक मैं उनके दर्मियान रहा फिर जब तूने मुझ पर मौत तारी की तो तू ही उनका निगहबान था और तू हर चीज़ का गवाह है।"

आख़ीर की आयत में تَوَفَّيْتَنِيْ के मअनी सिवाए मारने के और कोई लिए ही नहीं जा सकते, क्योंकि अगर कोई और मअनी लिए जाऐंगे तो मफ़्हूम बिल्कुल ग़लत हो जाएगा और ये अम्र इस क़द्र ज़ाहिर है कि किसी मज़ीद तसरीह की ज़रूरत नहीं।

दूसरी आयत जिससे मालूम होता है कि हज़रत ईसा उम्र तबई तक पहुंचने के बाद बूढ़े हो कर मरे ये है :

وَيُكَلِّمُ النَّاسَ فِي الْمَهْدِ وَكَهْلًا (सूरह आले-इमरान 46)

तर्जुमा "और (मसीह) बात करेगा गहवारे में और आलमे ज़ईफ़ी (बुढ़ापे) में।"

ये आयत उस सिलसिले की है जब फ़रिश्ते ने मर्यम को बेटे की विलादत की ख़ुशख़बरी दी थी। इस आयत में इस तरफ़ इशारा है कि वो इस क़द्र तंदुरुस्त पैदा होंगे कि गहवारे ही में दूसरे तवाना बच्चों की तरह बातें करने लगेंगे और ज़ईफ़ी में पहुंचने के बाद भी उनका यही आलम रहेगा। इस आयत में लफ़्ज़ كَهْلًا से साफ़ तौर पर ये अम्र वाज़ेह हो जाता है कि कलाम मजीद में मसीह की उम्र तबई तक पहुंचने की पेशगोई मौजूद है।

फिर जब मसीह का उम्र तबई तक पहुंचना इस तरह साबित होता है तो ये बात साफ़ हो जाती है कि आप सलीब से नहीं मरे। क्योंकि जिस वक़्त आपको सलीब दी गई आपकी उम्र (32) साल कुछ दिन की थी और इस उम्र के इन्सान को كَهْلًا (ज़ईफ़) नहीं कह सकते। और इस सूरत में مُتَوَفِّيْكَ के मअनी वही लिए जाऐंगे जो हमने बयान किए हैं।

बाअज़ मुफ़स्सिरीन ने يُكَلِّمُ النَّاسَ فِي الْمَهْدِ से आपका ये मोअजिज़ा साबित किया है कि आप गहवारे ही में बातें करने लगे अव्वल तो गहवारे यानी आलम-ए-तिफ़्ली में बच्चों का बातें करना कोई ग़ैर-मामूली बात नहीं। बहुत से तंदुरुस्त बच्चे शीर ख़्वारगी ही के ज़माने में बोलने लगते हैं और अगर वाक़ई इस से इज़्हार मोअजिज़े का है तो كَهْلًا बेकार हो जाता है और इस के ज़िक्र की ज़रूरत नहीं रहती। मुनासिब मालूम होता है कि इस जगह हम सलीब दीए जाने के वाक़िये को मरबूत सूरत में बयान कर दें ताकि वाक़ियात यकजाई तौर पर सामने आ जाऐं और आयात क़ुर्आन के समझने में आसानी हो।

आम तौर पर ख़याल किया जाता है कि सलीब पर चढ़ाना ये मअनी रखता था कि इन्सान यक़ीनन और फ़ौरन मर जाता था। हालाँकि ये ग़लत है। सलीब पर चढ़ाए जाने की ये सूरत हुआ करती थी कि इन्सान को एक लंबे तख़्ते के साथ मिला कर खड़ा करते थे और उस के हाथों को दूसरे तख्ते पर जो पहले तख्ते पर मत्तकाते सूरत में जुड़ा होता था फैला देते थे और किस कर बांध देते थे इसी तरह पांव रखकर तख्ते के साथ कील जड़ देते थे या बांध देते थे ताकि आदमी नीचे को ना सरक सके। बस इस का नाम सलीब दिया जाना था। मस्लूब इन्सान को इसी हाल में भूका प्यासा छोड़ देते थे।

यहां तक कि वो धूप, भूक और हाथ पांव के ज़ख़्मों की तक्लीफ़ से दो चार दिन में हलाक हो जाता था।

जुमा के दिन दोपहर को मसीह सलीब पर चढ़ाए गए। चूँकि उसी दिन शाम से यौम सबत शुरू होने वाला था इसलिए यहूदीयों के एतिक़ाद के बमूजब शाम से पहले मसीह को दफ़न भी हो जाना चाहिए था। लेकिन इस ख़याल से कि इस क़द्र रजला कोई शख़्स सलीब पर नहीं मर सकता ये राय क़रार पाई कि मसीह की टांगें तोड़ दी जाएं ताकि वो जल्द हलाक हो जाएं। लेकिन जब आपको जाकर देखा तो आप पर शिद्दत-ए-तक्लीफ़ से ग़शी की सी हालत तारी थी और सब ने ग़लती से ये समझ लिया कि आप मर गए हैं। चुनान्चे आपके दफ़न किए जाने की इजाज़त दे दी गई। और रात ही को आपके एक हवारी ने ले जा कर दफ़न कर दिया या किसी ग़ार में छिपा दिया। और फिर वहां से आपको निकाल कर ले गया। इस के तीसरे दिन बाद जब आपकी क़ब्र को देखा गया तो पत्थर सरका हुआ था और लाश मौजूद ना थी। इस वाक़िये पर हवारियों ने मशहूर कर दिया कि आप आस्मान पर उठा लिए गए ताकि यहूदी तलाश ना करें और इस को मोअजिज़ा समझ कर आपकी नबुव्वत पर ईमान ले आएं। इस के बाद ये नहीं कहा जा सकता कि हज़रत ईसा अपने हवारियों के साथ कहाँ गए। कब तक ज़िंदा रहे और कहाँ मदफ़ून हैं। इन्जील की रिवायत से मालूम होता है कि आप मए हवारियों के गलील चले गए थे। अहमदी जमाअत का बयान है कि वो वादी-ए-कश्मीर में आए। चुनान्चे श्री-नगर में उनका मज़ार मौजूद है जो नबी साहब का मज़ार कहलाता है।

जो वाक़ियात इन्जील की रिवायत से मालूम हुए हैं उनसे भी यही साबित होता है कि आपने मस्लूब होने की हालत में जान नहीं दी। मसलन चंद घंटे सलीब पर रहना जबकि कई दिन में मामूलन मस्लूब की जान निकलती है मसीह के साथ

जो दो शख़्स और मस्लूब हुए थे और वो भी शाम को उतार लिए गए थे ज़िंदा रहे। मगर ख़ुदा आपके जिस्म को आस्मान पर उठा लेता तो जहां आप ग़ार या क़ब्र में मदफ़ून थे वहां का पत्थर सरकने की कोई वजह ना थी। क्योंकि ख़ुदा को ऊपर उठाने के लिए पत्थर हटाना ज़रूरी ना था। जब आप वाक़िया सलीब के बाद अपनी माँ से मिले तो जिस्म पर ज़ख़्मों के निशान मौजूद थे। और आप भेस बदले हुए थे जिससे मालूम होता है कि वाक़ई आप मस्लूब हुए और ज़िंदा उतार लिए गए और इसी डर से कि यहूदीयों को पता ना चल जाये भेस बदल कर अपनी माँ से मिले।"

बहस-ए-माफ़ौक़ का ख़ुलासा

बहस-ए-माफ़ौक़ का ख़ुलासा इन तीन बातों में है कि :-

(1) हज़रत ईसा को सलीब तो दी गई लेकिन सलीब से नहीं मरे। बल्कि उम्र तबई पहुंच कर किसी नामालूम जगह में फ़ौत हो कर मदफ़ून हुए।

(2) आयात **وَرَافِعُكَ إِلَيَّ** और **رفعه الله اليه** से ये मालूम नहीं होता कि आप ब जसद अंसरी (जिस्म समेत) आस्मान पर ज़िंदा मौजूद हैं बल्कि इनसे आपकी रिफअत-ए-मंजिलत (दर्जे और मर्तबे की बुलंदी) ज़ाहिर होती है।

(3) जो वाक़ियात इन्जील की रिवायत से मालूम हुए हैं उनसे ये भी साबित होता है कि आपने मस्लूब होने की हालत में जान नहीं दी।

जैसी मेरी आदत है इरादा था कि इस हिस्से का भी फ़िक़्रह वार जवाब लिखता जाऊं, लेकिन किताब की ज़ख़ामत का मुझे बेहद ख़याल है। लिहाज़ा इस हिस्से पर बहस करने के लिए एक नई तर्ज़ इख़्तियार करूँगा ताकि हज़रत नियाज़ को फ़िक़्रह वार जवाब भी मिलता जाये और किताब भी तवालत से महफ़ूज़ रहे। वो ये कि मैं शक़ नम्बर 2 की तर्दीद करूँगा जिसका नतीजा ये होगा कि (अलिफ़) या तो आपने इस क़ौल से कि मसीह फ़ौत हो चुके हैं और कहीं मदफ़ून हैं रुजू करेंगे और या (ब) आप मसीहियों का अक़ीदा जो **اقرب الی الصواب** है इख़्तियार करेंगे कि हज़रत ईसा

सलीब पर फ़ौत हो गए और फिर ख़ुदा की क़ुद्रत से ज़िंदा हो कर ब-जसद अंसरी (जिस्म के साथ) आस्मान पर चले गए।

हज़रत ईसा ब-जसद-ए-अंसरी (जिस्म समेत) आस्मान पर ज़िंदा हैं

आप फ़र्माते हैं कि इस के बाद सवाल उनके आस्मान पर उठाए जाने का है जिसके सबूत में **وَرَافِعُكَ إِلَيَّ** और **رفعه الله اليه** के अल्फ़ाज़ पेश किए जाते हैं लेकिन यहां रफ़अ (उठाने) से मुराद रफ़अ जिस्म (जिस्म का उठाना) नहीं बल्कि रिफअत-ए-मर्तबत (दर्जे और मर्तबे कि बुलंदी) मुराद है। जैसा कि मुफ़रिदात इमाम राग़िब और तफ़्सीर कबीर में भी सराहतन मज़्कूर है। अरबी में रफ़अ के (*رفع*) मआनी रफ़अ क़द्र के भी आते हैं और रफ़ीअ उस शख़्स को कहते हैं "जो मुअज़्ज़िज़ व बुलंद मर्तबत वाला हो।"

हमें फिर अफ़्सोस कि साथ कहना पड़ता है कि हज़रत नियाज़ की ये कोराना तक़्लीद उनके दामन-ए-शौहरत पर एक बदनुमा दाग़ हो कर चमकेगी। आप लिखने को तो सब कुछ लिख गए लेकिन इस तरह कि एक जुम्ला भी नहीं ऐसा मिलता जिसको आपके क़लम मेहनत रक़म की तराविश कह सकें। आपको सर सय्यद मर्हूम की तफ़्सीर पर यहां तक एतिमाद है कि इस के बिल-मुक़ाबिल दूसरी किताबों की तरफ़ रुजू करना कुफ़्र समझते हैं। चुनान्चे सर सय्यद मर्हूम लफ़्ज़ "रफ़अ" (*رفع*) के माअनी ये करते हैं कि "इस से हज़रत ईसा की क़द्रो मंजिलत मुराद है ना ये कि उन के जिस्म उठा लेने का।" और आप इस इबारत को यूं बयान करते हैं कि "यहां रफ़अ (उठाने) से मुराद रफ़अ जिस्म (जिस्म का उठाना) नहीं है बल्कि रिफअत-ए-मर्तबत (दर्जे व मर्तबे की बुलंदी) मुराद है जो सरासर ग़लत और क़ुर्आन मजीद के साथ खेलना है। "सराह" में जो अरबी लुगात में एक मुम्ताज़ लुग़त है "रफ़अ" (*رفع*) के मअनी बरादश्तन लिखा है। इस की इबारत ये है, *رفع برداشتن وہو خلاف الوضع* "यानी रफ़अ के मअनी ऊपर उठाने के हैं और इस के बिल-मुक़ाबिल लफ़्ज़ वज़अ (*وضع*) है जिसके मअनी नीचे रखने के हैं।" "मिस्बाह मुनीर" में लिखा है कि **رفعته رفعاً خلاف خفضته** यानी अरब जब किसी चीज़ को ऊपर उठाते हैं तो कहते हैं कि रिफ़अतन **رفعته** (मैंने इस को ऊपर उठाया) और जब किसी चीज़ को नीचे रखते हैं तो कहते हैं कि **خفضته**

(मैंने इस को नीचे रखा) यानी रफ़अ (رفع) और ख़फ़ज़ (خفض) दो मुतक़ाबिल अल्फ़ाज़ हैं जो एक दूसरे के बर-ख़िलाफ़ इस्तिमाल होते हैं।

"सराह" में लफ़्ज़ रफ़अ (رفع) के नीचे एक मुहावरा भी लिखा हुआ है कि **ومن ذالك قولهم رفعته الى السلطان** जिससे बाअज़ नादान ये समझते हैं कि जब लफ़्ज़ रफ़अ़ (رفع) का सिला इला अस्मा (صلہ الیٰ اسما) है तो इस से मुराद रिफअत-ए-मर्तबत होती है। इस मुहावरे की बिना पर हज़रत ईसा के रफ़अ जिस्मी से इन्कार करना ना सिर्फ अरबी से नावाक़िफ़ होने की दलील है बल्कि फ़ारसी तक ना जानने का सबूत है। क्योंकि इस अरबी मुहावरे के शुरू में ये फ़ारसी इबारत मौजूद है ونزدیک گردانیدن کسے رابہ کسی ذالک الخ "यानी रफ़अ़ के दूसरे मअनी "किसी को किसी के क़रीब करने के हैं।" और इसी क़बील से अरबों का ये मुहावरा है कि मैं इस को बादशाह के नज़्दीक ले गया।" अब कोई इन मुदईयान (दावेदार) अरबियत से तो पूछे कि نزدیک گردایندن کسے رابہ کسے के माअनी किस तरह रिफ़अत मर्तबत के हो सकते हैं। क़िब्ला किसी को किसी के नज़्दीक करने में क़ुर्ब जमी मल्हूज़ होता है ना ये कि किसी शख़्स को घर में बैठे बिठाए इज़्ज़त व मंज़िलत दिलाना। पस رفعته الى السلطان के ये मअनी हैं कि "मैं इस को बादशाह के पास ले गया" इज़्ज़त और ज़िल्लत का इस में कोई लिहाज़ नहीं। क्योंकि यही मुहावरा ऐन उस वक़्त भी बोला जाता है जब किसी को शिकायतन बादशाह के पास ले जाते हैं। "मुंतहा-उल-अरब" में इस मुहावरे के नीचे कि **رفعه الى الحاكم** लिखा है कि شکایت برُد پیش حاکم ونزدیک آن شد باخصم फ़त्ह-उल-बारी शरह सही बुख़ारी में भी इस मुहावरे के नीचे **رفعه الى الحاكم** लिखा है कि "यानी शिकायत के लिए इस को हाकिम के पास ले गया।" (जुज़ 9)

नुक्ता

ये नुक्ता याद रखने के क़ाबिल है कि "सराह" की इबारत ज़ेर-ए-बहस का मतलब ये है कि अगर "राफ़ेअ जिस्मी" के साथ मर्तबत व मंज़िलत का भी इरादा हो तब रफ़अ़ (رفع) का सिला इला (الیٰ) लाना मुनासिब है क्योंकि रिफ़अते मंज़िलत रफ़अ़ जिस्मी की मुनाफ़ी (खिलाफ) नहीं। लेकिन इस सूरत में क़ुर्बत (नज़दिकी) का होना ज़रूरी है ताकि इरादा एज़ाज़ी पर दलालत करे। क्योंकि जब रफ़अ (رفع) का

सिला इला (الی) है तो अक्सर इस के मअनी सिर्फ़ रफ़अ़ जिस्मी ही के होते हैं चुनान्चे अम्सिला (मिसाल) ज़ेल इस की शाहिद हैं :-

قال عثمان بن الهیثم حدثنا عرف عن محمد بن سیرین عن ابی هریرة قال کلنی رسول الله بحفظ زکواة رمضان فاتانی ایة فجعل یحثو من الطعام فاخذته فقلت لا رفعنك عالی رسول الله فِقص الحدیث فقال اذاویت الی فرشك فاقراء آیته الکرسی لن یزال من الله حافظ ولا یقربك شیطان حتی تصبح وقال النبی صدقك وهو کذوب ذاك شیطان

तर्जुमा "उस्मान बिन यसीम कहते हैं कि हमसे औफ़ ने हदीस बयान की वो मुहम्मद बिन सीरीन से वो अबू हुरैरा से रिवायत करते हैं कि मुझको आँहज़रत ﷺ ने सदक़ा ईद फ़ित्र की निगहबानी पर मुक़र्रर किया था एक शख़्स आकर इस में से लब भर कर ले जाने लगा मैंने इस पकड़ लिया। फिर मैंने कहा मैं तुझको रसूल के पास ज़रूर ले जाऊँगा और पूरी हदीस बयान की। उसने बताया कि जब तू अपने बिस्तर पर आराम करे तो आयतल-कुर्सी पढ़ लिया कर। हमेशा तेरे हमराह अल्लाह निगहबान रहेगा और सुबह तक शैतान तेरे पास फटकने ना पाएगा। आँहज़रत ने फ़रमाया मैंने सच्च कहा हालाँकि वो झूटा है वो शख़्स शैतान था।" बुख़ारी जुज़ 21

फ़त्ह-उल-बारी शरह सही बुख़ारी में जुम्ला **لارفعنك الی الرسول** की शरह में ये इबारत लिखी हुई है कि, **ای لاذهبن بك شکوك یقال رفعه الی الحاکم اذا حضره للشکرئ** तर्जुमा : "यानी मैं बिल-ज़रूर तुझको रसूल-अल्लाह की जनाब में तेरी शरारत के सबब ले जाउंगा और तेरी शिकायत करूँगा।" अब हमारे करम फ़र्मा और उनके हमनवा ज़रा ग़ौर करें कि क्या हज़रत अबू हरैरह जैसे जलील-उल-क़द्र सहाबी (मआज़ अल्लाह) शैतान लईन को इज़्ज़त दिलाने की ग़र्ज़ से आँहज़रत के पास ले जाना चाहते थे?

(2) "मिसबाह मुनीर" में लफ़्ज़ रफ़अ़ (رفع) की तहत में लिखा है कि **رفعت المزرع الی البیرد** जिसका तर्जुमा "सराह, मुंतहा अल-अरब व मुन्तखब अल-लुग़ात" में ये लिखा है कि, *برداشتم غلہ درودہ و منجر من گا آوردم* यानी "खेत को काट कर और गल्ला उठा कर ख़िरमन गाह में ले आया।" क़ामूस और असास-उल-बलाग़ा में भी लिखा हुआ है।

(3) "सहीह बुख़ारी और मुस्लिम और मिश्कात-उल-मसाबेह" के (बाब अल-बका-अला-मय्यत के सफ़ा 150 मुजतबाई) में आँहज़रत की बेटी ज़ैनब के फ़र्ज़न्द और

जमनद के फ़ौत होने की हदीस में ये जुम्ला है कि, **فرفع الی سول اللہ الصبیتی** तर्जुमा, " यानी वो लड़का आपके पास उठा कर लाया गया।"

क़िब्ला इस मुहावरे को पढ़ कर फिर भी आप रफ़अ (رفع) जिस्मी के क़ाइल ना होंगे?

(4) "मजम-उल-बहार जिल्द सानी" में लफ़्ज़ रफ़अ (رفع) के नीचे लिखा है कि **فرفعه الی یدہ ای رفعه الی غایته طول یدہ لیر اہ الناس فیفطرون** तर्जुमा, "यानी आँहज़रत ने प्याले को दुरुस्त मुबारक की लंबाई के बराबर ऊपर उठाया ताकि लोग उसे देख लें और रोज़ा इफ़तार करें।"

ग़र्ज़ ये कि हमें सैंकड़ों बल्कि हज़ारों इस क़िस्म की मिसालें मालूम हैं जिनसे ब-सराहत ज़ाहिर होता है कि जब रफ़अ (رفع) का सिला इला (الی) आता है तो इस के मअनी शए मज़्कूर को बदख़ूल इला की तरफ़ उठाने के कहते हैं। चूँकि हमारे मुहतरम अरबियत के मुद्दई नहीं इसलिए इन चंद मिसालों पर इक्तिफ़ा किया जाता है।

बहर कैफ़ (हर हालत में, हर सूरत में) नअत में रफ़अ (رفع) के हक़ीक़ी और वज़ई मअनी ऊपर को उठाने के हैं। पस जहां कहीं रफ़अ (رفع) का मफ़ऊल कोई माद्दी हो वहां। इस से मुराद नीचे से ऊपर को हरकत करना होगा और अगर इस का मुताल्लिक़ और मामूल कोई ग़ैर माद्दी शए हो तो अक्तज़ा-ए-मुक़ाम पर महमूल (उठाया गया) होगा। चुनान्चे "मिसबाह मुनीर" में लिखा है कि, **فالرفع الاجسام حقیقیة فی الحرکته و الانتقال وفی المعانی علی ما یقتضیه المقام** तर्जुमा, "यानी रफ़अ (رفع) का ताल्लुक़ जब अज्साम के साथ होता है तो इस के हक़ीक़ी मअनी हरकत और इंतिक़ाल के होते हैं और जब मआनी के मुताल्लिक़ होता है तो जैसा मौक़ा हो वैसी ही मुराद होती है।"

"मिसबाह" की इस तसरीह से साफ़ ज़ाहिर है कि "रफ़अ" (رفع) के हक़ीक़ी वज़ई मअनी "इंतिक़ाल और हरकत" के होते हैं और अम्सला (मिसाल) माफ़ोक से साबित हो गया है कि "रफ़अ" (رفع) का सिला जब "इला" (الی) आए तो इस के मअनी शए मज़्कूर के मदख़ूल इला (الی) की तरफ़ मर्फ़ूअ (उठाया गया, बुलंद किया

गया) होने के होते हैं। पस وَرَافِعُكَ إِلَيَّ के मअनी बजुज़ इस के और कुछ नहीं कि हज़रत ईसा ब-जसद अंसरी (जिस्म समेत) आस्मान पर ज़िंदा और मौजूद हैं।

दूसरा नुक्ता

चूँकि हमने इरादा कर लिया है कि इस बहस का कामिल तौर पर तस्फ़ीया (फ़ैसला) करें लिहाज़ा यहां ऊपर एक और नुक्ता लिखते हैं वो ये है कि किनाया (इशारा) और मजाज़ में ये फ़र्क़ है कि किनायात में असली और हक़ीक़ी मअनी भी मुराद हो सकते हैं और मजाज़ात में नहीं चुनान्चे मुख़्तसर मआनी में जो इस फ़न में एक आला पाये की दर्सी किताब है लिखा है कि :-

الکنایۃ فی الغۃ مصدر کنیت بکذااعن کذا و کنوت اذا ترکت التصریح بہ وفی الاصطلاح لفظ اریدبہ لازم معنا ومع جواز اراحقہ محہ ای اراوۃ ذالك المعنی مع لازمہ کلفظ طویل النجاد المرادبہ طویل بل القامۃ مع جواذان یراد حقیقتہ طول النجاد ایضاً فظھر انھا تخالف المجاذمن جھتہ ارادۃ المعنی الحقیقی مع ارادۃ لازمہ کا رادتہ طول النجار مع ارادۃ طول القامۃ بخلاف المازفانہ لایجر زفیہ ارادۃ المعنی الحقیقی للزوم القرینۃ المافعتہ عن ارادۃ المعنی الحقیقی

तर्जुमा : “यानी किनाया मुअत्तिल याई या वादी है और इस के लुगवी मअनी मुबहम (यानी छिपे हुए) बात कहने के हैं। लेकिन इस्तिलाह में उस लफ़्ज़ को कहते हैं जिसके मअनी का लाज़िम मुराद हो और इस के साथ इस लफ़्ज़ के असली मअनी का इरादा भी जायज़ हो। मसलन तवील-उल-नजार, ये एक मुहावरा है जिसके लाज़िमी मअनी “दराज़-क़ामत” के हैं लेकिन इस के साथ इस के हक़ीक़ी बमाअनी (लंबे पर तला वाला) मुराद लेना भी जायज़ है। पस ज़ाहिर है कि किनाया और मजाज़ में यही फ़र्क़ है कि किनाया में लाज़िमी और हक़ीक़ी दोनों मअनी जमा हो सकते हैं। और मजाज़ हक़ीक़ी मअनी के साथ जमा नहीं हो सकता है।”

पस رَافِعُكَ اِلَيَّ के मअनी किनाई (बशर्ते के ऐसा ही हो) भी हमारे लिए मुज़िर नहीं बल्कि मुफ़ीद है क्योंकि ये दोनो मअनी एक दूसरे के मुनाफ़ी (खिलाफ) नहीं हैं। रफ़अ जिस्मी के साथ रिफअत-ए-मर्तबत का होना एक नबी-ए-बरहक़ के लिए नूर अला नूर है। जैसा कि आयत ज़ेल में भी ये दोनो बातें साबित हैं कि **رفع ابویه علی العرش** यानी यूसुफ़ ने अपने वालदैन को तख़्त पर चढ़ा कर बिठाया।" इस में रफ़अ जिस्मी के साथ इज़्ज़त व इकराम भी मल्हूज़ है।

जाहिलों से कुछ बईद नहीं अगर ये कहें कि हम तो इस के मजाज़ी मअनी मुराद लेते हैं। लिहाज़ा मुनासिब है कि हम उनको भी ये बतलाएं कि आयत **وَرَافِعُكَ اِلَيَّ** के मजाज़ी मअनी भी मुराद नहीं हो सकते हैं क्योंकि मजाज़ के लिए ये शर्त है कि हक़ीक़ी मअनी के लेने से अगर क़बाहत लाज़िम आ जाये या कोई क़रीना (बहमी ताल्लुक़) ऐसा हो कि हक़ीक़ी मअनी लेने से मना करें। चुनान्चे मुख़्तसर मआनी में लिखा है कि :-

المجاز مفرد مرکب اما المفرد فهوا الکلمة المستعمله فی غیر ماوضعت لدفی اصطلاح به التخاطب علی وجه یصح مع قرینة عدم ارادته ای ارادة الموضوع له

तर्जुमा : "यानी मजाज़ वो कलमा है जो अपने हक़ीक़ी मअनी में मुस्तअमल ना हो और कोई क़रीना (बहमी ताल्लुक़) भी क़ायम हो जिससे ये बात मालूम हो जाए कि कलमे के हक़ीक़ी मअनी मुराद नहीं हैं।"

चूँकि आयत ज़ेर-ए-बहस के हक़ीक़ी मअनी लेने में ना तो कोई क़बाहत लाज़िम आती है और ना इस में कोई क़रीना (बहमी ताल्लुक़) इस क़िस्म का है जो हक़ीक़ी मअनी के इख़्तियार करने को रोके लिहाज़ा आयत-ए-माफ़ौक़ के मजाज़ मअनी लेना सरासर बातिल है।

इसी अस्ल ज़रीन (बेशक़ीमत) को मद्द-ए-नज़र रखकर क़ुर्आन मजीद ने जहां कहीं लफ़्ज़ रफ़अ (رفع) को ब-मअना-ए-रिफ़अते मर्तबत इस्तिमाल किया है उन कुल मुक़ामात में कोई ना कोई क़रीना (बहमी ताल्लुक़) इस क़िस्म का क़ायम किया है जिससे साफ़ तौर पर मालूम होता है कि यहां मअना-ए-मौज़ूअला (हक़ीक़ी) मुराद नहीं है मसलन :-

وَّ رَفَعۡنٰهُ مَكَانًا عَلِيًّا (सूरह मर्यम आयत 57) رَفَعَ بَعۡضَهُمۡ دَرَجٰتٍ (सूरह बक़रह आयत 253) نَرۡفَعُ دَرَجٰتٍ مَّنۡ نَّشَآءُ ؕ (सूरह अनआम आयत 83) رَفَعَ بَعۡضَكُمۡ فَوۡقَ بَعۡضٍ دَرَجٰتٍ (सूरह मर्यम आयत 165) وَرَفَعۡنَا بَعۡضَهُمۡ فَوۡقَ بَعۡضٍ دَرَجٰتٍ (सूरह अल-ज़ुखरूफ आयत 32) इन तमाम आयात में अल्फ़ाज़ مَكَانًا عَلِيًّا व دَرَجٰتٍ क़रीने हैं इस बात के कि लफ़्ज़ "रफ़अ़" (رَفَعَ) अपने असली मअनी में मुस्तअमल नहीं है।

इमाम राग़िब और इमाम राज़ी पर तोहमत

हमारे करम फ़र्मा का ये लिखना कि "यहां रफ़अ़ (رَفَعَ) (उठाना) से मुराद रफ़अ़ जिस्म (जिस्म का उठाना) नहीं बल्कि रिफअत-ए-मर्तबत मुराद है। जैसा कि मफ़रुदात इमाम राग़िब और तफ़्सीर कबीर में भी सराहतन मज़्कूर है।" इमाम राग़िब और इमाम फ़ख़्र उद्दीन राज़ी रहमतुल्लाह अलैह पर बोहतान बांधना और सफ़ैद चश्मी की तोहमत लगाना है। किसी अम्र की तहक़ीक़ के लिए क़ाबिल-ए-वसूक़ (यक़ीन) अश्ख़ास का सिर्फ नाम लेना काफ़ी नहीं हो सकता है तावक़्ते के उनके तहरीरी बयान भी पेश ना किए जाएं। चूँकि उनकी किताबें आपकी नज़र से नहीं गुज़री हैं इसलिए समाई तौर पर आपने उनका नाम लिख दिया। लीजिए आपकी ख़ातिर हम इन दोनो किताबों की इबारात नक़्ल किए देते हैं :-

(1) इमाम फ़ख़्र-उद्दीन राज़ी रहमतुल्लाह अलैह इसी आयत की तहत में लिखते हैं कि :-

وقد ثبت بالدلیل انه حی وورد الخبر عن النبی انه سینزل ویقتل الدجال ثم انه تعالیٰ یتوفاه بعد ذالك

तर्जुमा : "यानी बेशक ये बात दलील से साबित है कि हज़रत ईसा ज़िंदा हैं और इस बारे में नबी से हदीस भी आ चुकी है कि आप उतरेंगे और दज्जाल को क़त्ल करेंगे और फिर इस के बाद अल्लाह तआला आपको वफ़ात देगा।" (तफ़्सीर कबीर जिल्द दोम)

(2) फिर इसी तफ़्सीर में लिखते हैं कि :-

روی انه علیه الصلواۃ والسلامه لما اظهر هذاالمعجزات العجیبة قصد الیهود قتله فخلصبه الله منهم حدیث رفعه الی السماء

तर्जुमा : "यानी मर्वी है कि जब हज़रत ईसा अलैह सलातो वस्सलाम ने ये अजीब मोअजज़ात दिखलाए तो यहूदीयों ने आपके क़त्ल का क़सद किया और सो ख़ुदा तआला ने आपको उनके हाथों से इस तरह ख़लासी बख़्शी कि आस्मान पर उठा लिया।"

(3) हज़रत इमाम फ़ख़्र-उद्दीन राज़ी रहमतुल्लाह अलैह को हज़रत ईसा के रफ़अ जिस्म पर यहां तक वसूक़ (यक़ीन) है कि आपने इस एतराज़ का भी जवाब दिया है जो इस पर वारिद होता है कि रफ़अ जिस्मानी इंदल-अक़्ल मुतअज़्ज़र है। चुनान्चे आप इस आयत की तफ़्सीर में लिखते हैं कि :-

"بل رافعه الله الیه وکان الله عزیزاً حکیما" والمراد من العزة کمال القدرة ومن الحلمته العلم فنبه هذا علیٰ ان رفع عیسیٰ من الدنیا الی السموات وان کان المتعدر علیٰ البشر الکته لاتعذر فیه بالنسبته الی قدرتی ولی حکمتی وهو نظیر قوله تعالیٰ سبحان الذی اسریٰ بعبده لیلاً فان الاسراء وان کان متعذراً بالنسبته الی قدرة محمد الا انه سهل بالنسبته الی قدرة الحو سبحان"

तर्जुमा : "यानी इस आयत में इज़्ज़त से कमाल-ए-क़ुद्रत हिक्मत से कमाल इल्म मुराद है। पस इस आयत से ख़ुदा ने इस पर आगाह किया कि हज़रत ईसा का आस्मान पर उठाया जाना अगरचे इन्सान की ताक़त से बाहर है लेकिन मेरी क़ुद्रत और हिक्मत की निस्बत कोई चीज़ नहीं है। और ये आयत سبحان الذی اسریٰ بعبده इस की नज़ीर है कि इस्रा अगरचे आँहज़रत की क़ुद्रत की निस्बत मुतअज़्ज़र था मगर हक़ सुब्हानहु व तआला की क़ुद्रत के आगे बिल्कुल सहल था।"

(4) फिर हज़रत इमाम रहमतुल्लाह फ़र्माते हैं कि :-

" ولمنا علم الله ان من الناس من یخطر بباله ان الذی رفعه الله هو روحه لاجسده ذکر هذا الکلام لیدل علی انه علیه الصلواۃ والسلام رفع بتمامه الی السماء بروحه وجسده"

(तफ़्सीर कबीर जिल्द दोम तफ़्सीर ख़ाज़िन)

तर्जुमा : “यानी चूँकि अल्लाह को मालूम था कि किसी के दिल में ये ख़याल भी पैदा होगा कि अल्लाह तआला ने हज़रत ईसा की रूह को उठाया था। इसलिए अल्लाह ने متوفيك फ़रमाया ताकि इस बात पर दलालत करे कि अल्लाह तआला ने आपको बतमामा मए जिस्म और रूह के आस्मान पर उठा लिया।”

मेरी दानिस्त में तफ़्सीर कबीर के हवालेजात माफ़ौक़ एक बा-हया शख़्स के लिए इस बात को बावर करने के लिए काफ़ी हैं कि हज़रत इमाम फ़ख़्र-उद्दीन राज़ी रहमतुल्लाह हरगिज़ हज़रत ईसा के रफ़अ जिस्मी के मुन्किर नहीं हैं। अब हम मुफ़रिदात इमाम राग़िब रहमतुल्लाह अलैह की इबारत नक़्ल करते हैं। इमाम साहब लफ़्ज़ “रफ़अ” (رفع) पर बहस करते हुए लिखते हैं :-

"الرفع يقال تاوة فی الاجسام الموطرعته اذا علیتها عن مقرها ...وتازة البناء اذا طولته .... وتارة فی الذکر اذا فوهته .....وتارة فی المنزلته اذا شهر فتها"

तर्जुमा : “यानी लफ़्ज़ रफ़अ (رفع) का इस्तिमाल चार तरह पर है कभी इन अज्साम पर जो एक ख़ास जगह पर रखे गए हैं। जब उनको उनकी जाये क़रार से ऊँचा कर दिया जाये। और कभी इमारत पर जब उस को बुलंद कर दिया जाये। और कभी ज़िक्र पर जब उस को शौहरत दी जाये। और मर्तबे पर जब उसे शर्फ या बुज़ुर्गी दी जाये।”

इस इक़्तिबास और इस के तर्जुमे को देखकर हमारे करम फ़र्मा दिल ही दिल में हमारी सुराग़ रसानी के क़ाइल ज़रूर हो गए होंगे क्योंकि इक़्तिबास माफ़ौक़ उस के तर्जुमा के साथ मौलवी मुहम्मद अली साहब के इस रिसाले[6] से लिया गया है जिसका नाम ले लेना हमारे करम फ़र्मा को मंज़ूर नहीं है (ख़ुदा जाने क्यों?) जब हम क़ारईन किराम से इन्साफ़ चाहते हैं कि वो हमें बताएं कि इबारत-ए-माफ़ौक़ के किस जुम्ला या लफ़्ज़ से ये साबित होता है कि यहां रफ़अ (رفع) से मुराद रफ़अ जिस्म नहीं बल्कि “रिफअत-ए-मर्तबत” है। इमाम राग़िब भी वही कह रहे हैं जो हम कह चुके हैं

---

6 देखो रिसाला ईस्वियत का आख़िरी सहारा सफ़ा 22 मुसन्निफ़ा मौलवी मुहम्मद अली साहब (सुलतान)

कि लफ़्ज़ रफ़अ (رفع) के हक़ीक़ी मअनी "ऊपर उठाने" के हैं और बाक़ी मआनी में हस्ब-उल-क़ुर्आन मुस्तअमल है जिससे हमें हरगिज़ इन्कार नहीं है।

बहस-ए-माफ़ौक़ का नतीजा

यहां तक तो लफ़्ज़ रफ़अ (رفع) पर बहस हुई जिसका नतीजा ये निकला कि आयात **رافعك الی** और **رفعه الله اليه** में लफ़्ज़ रफ़अ (رفع) अपने हक़ीक़ी मअनी ना मअनाए बाला बर्दाश्तन में मुस्तअमल है। नीज़ मज़ीद इन्किशाफ़ के लिए हमने ये भी साबित कर दिया कि आयात-ए-माफ़ौक़ में रफ़अ (رفع) के मअनी ना तो किनाई के लिए जा सकते हैं और ना मजाज़ी के। और ना इमाम फ़ख़्र-उद्दीन राज़ी और ना इमाम राग़िब हज़रत ईसा की मौत के क़ाइल हैं। अब हज़रत नियाज़ के लिए बजुज़ (बग़ैर) इस के और कोई चारा नहीं कि वो ज़ेल के दो अम्रों में से एक को इख़्तियार करें यानी या तो आप (1) ये तस्लीम करें कि हज़रत ईसा मुतलक़ फ़ौत ही नहीं हुए (जैसा कि अहले-सुन्नत वल-जमाअत का अक़ीदा है और ब-जसद-ए-अंसरी (जिस्म समेत) ज़िंदा आस्मान पर उठाए गए और या (2) ये तस्लीम करें कि हज़रत ईसा आरिज़ी तौर पर फ़ौत हुए (जैसा कि हम मसीहियों का अक़ीदा है) और फिर ख़ुदा ने आपको ज़िंदा करके ब-जसद अंसरी (जिस्म समेत) आस्मान पर उठा लिया। लेकिन हज़रत नियाज़ अम्र अव्वल को तस्लीम नहीं कर सकते क्योंकि आप लफ्ज़ **متوفيك** को ब-मअनाए **مميتك** क़ुबूल कर चुके हैं और हम भी तस्लीम करते हैं कि फ़िल-हक़ीक़त आयत "मुशार अलैहा" में **متوفيك** ब-मअनाए **مميتك** हैं। इसलिए इस पर बहस करना हमने तहसील हासिल समझा। लेकिन चूँकि हमने ये साबित कर दिया है कि हज़रत ईसा ब-जसद-ए-अंसरी (जिस्म के साथ) आस्मान पर ज़िंदा उठाए गए हैं लिहाज़ा हज़रत नियाज़ को मजबूरन दूसरा अम्र इख़्तियार करना पड़ेगा ताकि **متوفيك** और **رافعك الی** में तआरुज़ (टकराव) वाक़ेअ ना हो जाए। चुनान्चे यही ऐन सवाब और क़ुर्आन-ए-करीम व इन्जील-ए-जलील के मुताबिक़ है। क़ुर्आने पाक से तो हम इस पर रोशनी डाल चुके हैं सिर्फ इन्जील जलील से इस पर बहस करना बाक़ी है जो हस्ब-ए-ज़ेल है :-

इन्जील जलील और हज़रत ईसा की मौत व रफ़अ़

हज़रत नियाज़ तहरीर फ़र्माते हैं कि :-

> “जो वाक़ियात इन्जील की रिवायत से मालूम हुए हैं उनसे भी साबित होता है कि आपने मस्लूब होने की हालत में जान नहीं दी।”

हर चंद (कितना ही) हमारे करम फ़र्मा की ग़लती और इन्जील ना वाक़फ़ीयत के इज़्हार के लिए सिर्फ यही एक जुम्ला काफ़ी था कि “सर झुका कर जान दी।” (यूहन्ना 19:30) लेकिन अज़ बस कि आप अपने क़ुतबैन (सर सय्यद मर्हूम और मौलवी मुहम्मद साहब) के इक़्तिदार पर वाक़ियात पर बाज़ी लगा रहे हैं इसलिए मुनासिब मालूम होता है कि हम हज़रत मसीह के सलीबी वाक़ियात को अनाजील के अल्फ़ाज़ में पेश करें ताकि क़िमारख़ाना (जूवा खेलने का मकान) तक़्लीद में हज़रत नियाज़ के दिल व दीन का माजरा मालूम हो सके। वो वाक़ियात ज़ेल में दर्ज किए जाते हैं :-

हज़रत ईसा (येसू) का पकड़ा जाना

(मत्ती 26:47 ता 56; लूक़ा 22:47 ता 53; यूहन्ना 18:3 ता 11)

“वो ये कह ही रहा था कि फ़ील-फ़ौर यहूदाह जो इन बारह (12) में से था और उस के साथ एक भीड़ तलवारें और लाठीयां लिए हुए सरदार काहिनों और फ़क़ीहों और बुज़ुर्गों की तरफ़ से आ पहुंची। और उस के पकड़वाने वाले ने उन्हें ये पता दिया था कि जिसका मैं बोसा लूं वही है। उसे पकड़ कर हिफ़ाज़त से ले जाना। वो आकर फ़ील-फ़ौर उस के पास गया और कहा, ऐ रब्बी, और उस के बोसे लिए। उन्हों उस पर हाथ डाल कर उसे पकड़ लिया। उनमें से जो पास खड़े थे एक ने तल्वार खींच कर सरदार काहिन के नौकर पर चलाई और उस का कान उड़ा दिया। येसू ने उनसे कहा, क्या तुम तलवारें और लाठीयां लेकर मुझे डाकू की तरह पकड़ने निकले हो? मैं हर रोज़ तुम्हारे पास हैकल में ताअलीम देता था और तुमने मुझे नहीं पकड़ा। लेकिन ये इसलिए हुआ कि नविश्ते पूरे हूँ। उस के सारे शागिर्द उसे छोड़कर भाग गए। मगर

एक जवान अपने नंगे बदन पर महीन चादर ओढ़े हुए उस के पीछे हो लिया। उसे लोगों ने पकड़ा मगर वो चादर छोड़कर नंगा भाग गया।”

यहूदीयों की सदर अदालत में सय्यदना ईसा के मुक़द्दमे की पेशी

(मत्ती 26:57 ता 68; लूक़ा 22:63 ता 71; यूहन्ना 18:12 ता 14 और 19 ता 24

“फिर वो येसू को सरदार काहिन के पास ले गए। और सब सरदार काहिन और बुज़ुर्ग और फ़क़ीह उस के हाँ जमा हो गए। और पतरस फ़ासले पर उस के पीछे पीछे सरदार काहिन के दीवान ख़ाने के अंदर तक गया। और प्यादों के साथ बैठ कर आग तापने लगा। और सरदार काहिन और सारे सदर-ए-अदालत वाले येसू के मार डालने के वास्ते उस के ख़िलाफ़ गवाही ढूँढने लगे। मगर ना पाई क्योंकि बहुतेरों ने उस पर झूटी गवाहियाँ तो दीं लेकिन उनकी गवाहियाँ मुत्तफ़िक़ ना थीं। फिर बाअज़ ने उठ कर उस पर ये झूटी गवाही दी कि हमने उसे ये कहते सुना है कि मैं इस मुक़द्दस को जो हाथ से बना है ढाऊँगा और मैं तीन दिन में दूसरा बनाऊँगा जो हाथ से ना बना हो। लेकिन इस पर भी उनकी गवाही मुत्तफ़िक़ ना निकली। फिर सरदार काहिन ने बीच में खड़े हो कर येसू से पूछा कि तू कुछ जवाब नहीं देता? ये तेरे ख़िलाफ़ क्या गवाही देते हैं? मगर वो चुप ही रहा और कुछ ना जवाब दिया। सरदार काहिन ने उस से फिर सवाल किया और कहा, क्या तू उस सतूदा का बेटा मसीह है। येसू ने कहा हाँ मैं हूँ। और तुम इब्ने-आदम को क़ादिर-ए-मुतलक़ के दाहिनी तरफ़ बैठे और आस्मान के बादिलों के साथ आते देखोगे। सरदार काहिन ने अपने कपड़े फाड़ के कहा अब हमें गवाहों की क्या हाजत रही। तुमने ये कुफ़्र सुना। तुम्हारी क्या राय है? उन सब ने फ़त्वा दिया कि वो क़त्ल के लायक़ है। तब बाअज़ ने उस पर थूकने और उस का मुँह ढांपने और उस के मुक्के मारने और उस से कहने लगे, नबुव्वत की बातें सुना और प्यादों ने उसे तमांचे मार-मार के अपने क़ब्ज़े में लिया।” (मर्क़ुस बाब 14 आयात 43 ता 65)

पिन्तुस पीलातुस की कचहरी में सय्यदना ईसा के मुक़द्दमे की पेशी

(मत्ती 27:1 ता 2 और 11 ता 26; लूक़ा 23:1 ता 25; यूहन्ना 18:28 19:19)

“और फ़ील-फ़ौर सुबह होते ही इमाम-ए-आज़म ने बुज़ुर्गों और फ़क़ीहों और सब सदर अदालत वालों समेत सलाह करके सय्यदना ईसा को बंधवाया और ले जाकर पीलातुस के हवाले किया। पीलातुस ने आपसे पूछा “क्या तुम यहूदीयों के बादशाह हो?” आपने जवाब में उस से फ़रमाया तुम ख़ुद कहते हो। और इमाम-ए-आज़म आप पर बहुत इल्ज़ाम लगाते रहे। पीलातुस ने आपसे दुबारा सवाल करके ये कहा तुम कुछ जवाब नहीं देते? देखो ये तुम पर कितनी बातों का इल्ज़ाम लगाते हैं? सय्यदना ईसा ने फिर भी कुछ जवाब ना दिया यहां तक कि पीलातुस ने ताज्जुब किया।”

“पीलातुस ईद पर एक क़ैदी को जिसके लिए लोग अर्ज़ करते थे उनकी ख़ातिर छोड़ दिया करता था। और बरब्बा नाम एक आदमी उन बाग़ीयों के साथ क़ैद में पड़ा था जिन्हों ने बग़ावत में ख़ून किया था। भीड़ ऊपर चढ़ कर उस से अर्ज़ करने लगी कि जो तुम्हारा दस्तूर है वो हमारे लिए करो। पीलातुस ने उन्हें ये जवाब दिया। क्या तुम चाहते हो कि मैं तुम्हारी ख़ातिर यहूदीयों के बादशाह को छोड़ दूं? क्योंकि उसे मालूम था कि इमाम-ए-आज़म ने आपको हसद से मेरे हवाला किया है। मगर इमाम-ए-आज़म ने भीड़ को उभारा ताकि पीलातुस उनकी ख़ातिर बरब्बा ही को छोड़ दे। पीलातुस ने दुबारा उनसे कहा फिर जिसे तुम यहूदीयों का बादशाह कहते हो उस से मैं क्या करूँ? वो फिर चिल्लाए कि आप मस्लूब हों। पीलातुस ने उनसे फ़रमाया क्यों इस ने क्या बुराई की है? वो और भी चिल्लाए कि वो मस्लूब हो। पीलातुस ने लोगों को ख़ुश करने के इरादे से उनके लिए बरब्बा को छोड़ दिया और सय्यदना ईसा को कोड़े लगवा कर हवाले किया ताकि मस्लूब किए जाएं।” (मर्क़ुस 15:1 ता 15)

रूमी सिपाहीयों का सय्यदना ईसा को ठट्ठे में उड़ाना

(मत्ती 27:27 ता 31)

“इस पर हाकिम के सिपाहीयों ने सय्यदना ईसा को क़िले में ले जाकर सारी पलटन आपके गर्द जमा की और आपके कपड़े उतार कर आपको क़िरमज़ी चोग़ा पहनाया। और कांटों का ताज बना कर आपके सर पर रखा और एक सरकंडा आपके दहने हाथ में दिया आपके आगे घुटने टेक कर आपको ठट्ठों में उड़ाने लगे कि ऐ यहूदीयों के बादशाह आदाब और आप पर थूका और वही सरकंडा लेकर आप के सर

पर मारने लगे। और जब आप का ठट्ठा कर चुके तो चोगे को आप पर से उतार कर फिर आप ही के कपड़े पहनाए और मस्लूब करने को ले गए।"

सय्यदना ईसा का सलीब दिया जाना और लान-तान उठाना

(मत्ती 27:32 ता 34; लूक़ा 23:26 ता 43; यूहन्ना 19:17 ता 24)

"शमऊन नाम एक कुरेनी आदमी सिकन्दर और रोफूस का वालिद देहात से आते हुए इधर से गुज़रा। उन्होंने उसे बेगार में पकड़ा कि आपकी सलीब उठाए। और वो आपको मुक़ाम गलगता पर लाए जिसका तर्जुमा "खोपड़ी की जगह" है। और मुर मिली हुई मेय आपको देने लगे मगर आपने ना ली। उन्होंने आपको मस्लूब किया और आपके कपड़ों पर क़ुरआ डाल कर कि किस को क्या मिले उन्हें बांट लिया और पहर दिन चढ़ा था जब उन्होंने आपको मस्लूब किया। आपका इल्ज़ाम लिख कर आपके ऊपर लगा दिया गया कि **यहूदीयों का बादशाह** उन्होंने आपके साथ दो डाकूओं को एक को दाहिनी और एक आपकी बाएं तरफ़ मस्लूब किए। (तब इस मज़्मून का वो नविश्ता कि आप बदकारों में गिने गए पूरा हुआ) और राह चलने वाले सर हिला हिला कर आप पर लान-तान करते और कहते थे कि वाह बैत-अल्लाह के ढाने वाले और तीन दिन में बनाने वाले सलीब से उतर कर अपने तेईं बचाओ। इसी तरह इमाम-ए-आज़म भी फ़क़हियों के साथ मिलकर आपस में ठट्ठे से कहते थे आपने औरों को बचाया। अपने तईं नहीं बचा सकते। इस्राईल का बादशाह मसीह अब सलीब पर से उतर आएं ताकि हम देखकर ईमान लाएं और जो आपके साथ मस्लूब हुए थे वो आप पर लान-तान करते थे।" (मर्क़ुस 15:21 ता 32)

सय्यदना ईसा का मरना

(मत्ती 27:45 ता 56; लूक़ा 23:44 ता 49; यूहन्ना 19:28 ता 30)

"जब दोपहर हुई तो तमाम मुल्क में अंधेरा छा गया और तीसरे पहर तक रहा तीसरे पहर को सय्यदना ईसा बड़ी आवाज़ से चिल्लाए कि इलोही इलोही लमा शबकतनी? जिसका तर्जुमा है, ऐ मेरे ख़ुदा ऐ मेरे ख़ुदा आपने मुझे क्यों छोड़ दिया? जो पास खड़े थे उनमें से बाअज़ ने ये सुनकर कहा देखो वो इल्यास को बुलाते हैं।

एक ने दौड़ कर स्पंज को सिरके में डुबोया और सरकंडे पर रखकर आपको चुसाया और कहा ठहर जाओ। देखें तो इल्यास उन्हें उतारने आता हैं या नहीं। फिर सय्यदना ईसा ने बड़ी आवाज़ से चिल्ला कर दम दे दिया। बैत-अल्लाह का पर्दा ऊपर से नीचे तक फट कर दो टुकड़े हो गया। सूबेदार आपके सामने खड़ा था उसने आपको यूं दम देते हुए देखकर कहा बेशक ये आदमी इब्ने-अल्लाह है।" (मर्क़ुस 15:33 ता 39)

"पस चूँकि तैयारी का दिन था यहूदीयों ने पीलातुस से दरख़्वास्त की कि उनकी टांगें तोड़ दी जाएं और लाशें उतार ली जाएं ताकि सबत के दिन सलीब पर ना रहें। क्योंकि वो सबत एक ख़ास दिन था। पस सिपाहीयों ने आकर पहले और दूसरे शख़्स की टांगें तोड़ीं जो आपके साथ मस्लूब हुए थे। लेकिन जब उन्होंने सय्यदना ईसा के पास आकर देखा कि आप मर चुके हैं तो आप की टांगें ना तोड़ीं। मगर उनमें से एक सिपाही ने भाले से आपकी पसली छेदी और फ़ील-फ़ौर इस से ख़ून और पानी बह निकला।" (यूहन्ना 19:31 ता 34)

सय्यदना ईसा का दफ़न होना

(मत्ती 27:57 ता 61; लूक़ा 23:50 ता 56; यूहन्ना 19:38 ता 42)

"जब शाम हो गई तो उस के लिए तैयारी का दिन था जो सबत से एक दिन पहले होता है। अरमतियह का रहने वाला यूसुफ़ आया जो इज़्ज़तदार मुशीर और ख़ुद भी परवरदिगार की बादशाही का मुंतज़िर था उसने जुर्आत से पीलातुस के पास जाकर आपका जिस्म-ए-मुबारक मांगा। पीलातुस ने ताज्जुब किया कि आप ऐसे जिल्द वफ़ात पा गए और सूबेदार को बुला कर आपसे पूछा कि आपको वफ़ात पाए हुए देर हो गई? जब सूबेदार से हाल मालूम कर लिया तो जिस्म-ए-मुबारक यूसुफ़ को दिला दी। आपने एक महीन चादर मोल ली और जिस्म-ए-मुबारक को उतार कर चादर में कफ़नाया और एक क़ब्र के अंदर जो चट्टान में खोदी गई थी रखा और क़ब्र के मुँह पर एक पत्थर लुढ़का दिया। बीबी मर्यम मग्दलीनी और यूसीस की वालिदा बीबी मर्यम देख रही थीं कि आप कहाँ रखे गए हैं।" (मर्क़ुस 15:42 ता 47)

सय्यदना ईसा का जी उठना

(मत्ती 28:1 ता 8; लूक़ा 24:1 ता 20; यूहन्ना 20:1)

"जब सबत का दिन गुज़र गया तो बीबी मर्यम मग्दलीनी और हज़रत याक़ूब की वालिदा माजिदा बीबी मर्यम और बीबी सलोमी ने ख़ुशबूदार चीज़ें मोल लीं ताकि आकर आप पर मलें। वो हफ्ते के पहले दिन बहुत सवेरे जब सूरज निकला ही था क़ब्र पर आईं। और आपस में कहती थीं कि हमारे लिए पत्थर को क़ब्र के मुँह पर से कौन लुढ़काएगा? जब उन्होंने निगाह की तो देखा कि पत्थर लुढ़का हुआ है क्योंकि वो बहुत ही बड़ा था। क़ब्र के अंदर जाकर उन्होंने एक जवान को सफ़ैद जामा पहने हुए दाहिनी तरफ़ बैठे देखा और निहायत हैरान हुईं। उस ने उन से कहा ऐसी हैरान ना हो। तुम ईसा नासरी को जो मस्लूब हुआ था ढूंढती हो। वो जी उठे हैं। वो यहां नहीं हैं। देखो ये वो जगह है जहां उन्होंने ईसा नासरी को रखा था। लेकिन तुम जाकर उस के सहाबा किराम और पतरस से कहो कि वो तुमसे पहले गलील को जाऐंगे। तुम वहीं उसे देखोगे जैसा उसने तुमसे कहा वो निकल कर क़ब्र से भागें क्योंकि लर्ज़िश और हैबत उन पर ग़ालिब आ गई थी और उन्होंने किसी से कुछ ना कहा क्योंकि वो डरती थीं।"

सय्यदना ईसा का जी उठकर शागिर्दों को दिखाई देना

"हफ्ते के पहले रोज़ जब आप सवेरे जी उठे तो पहले बीबी मर्यम मग्दलीनी को जिसमें से आपने सात बद-रूहें निकाली थीं दिखाई दीए। उसने जाकर आपके साथीयों को जो मातम करते और रोते थे ख़बर दी। उन्होंने ये सुनकर कि आप जीते हैं और उस ने आपको देखा है यक़ीन ना किया।

इस के बाद आप दूसरी सूरत में उनमें से दो को जब वो देहात की तरफ़ पैदल जा रहे थे दिखाई दिए। उन्होंने भी जाकर बाक़ी लोगों को ख़बर दी मगर उन्होंने उनका भी यक़ीन ना किया।

फिर आप इन ग्यारह (11) को भी जब खाना खाने बैठे थे दिखाई दिए और आपने उनकी बे एतिक़ादी और सख़्त दिली पर उनको मलामत की क्योंकि जिन्हों ने आपके जी उठने के बाद आपको देखा था उन्होंने उनका यक़ीन ना किया था। आपने उनसे फ़रमाया तुम तमाम दुनिया में जाकर सारी ख़ल्क़ के सामने इन्जील की तब्लीग़ करो। जो ईमान लाए और इस्तिबाग़ ले वो नजात पाएगा और जो ईमान ना लाए वो मुजरिम ठहराया जाएगा।" (मर्क़ुस 16:1 ता 16)

सय्यदना ईसा का आस्मान पर जाना

"फिर आप उन्हें बैत-अनयाह के सामने तक बाहर ले गए और अपने हाथ उठा कर उन्हें बरकत दी। जब आप उन्हें बरकत दे रहे थे तो ऐसा हुआ कि उनसे जुदा हो गए और आस्मान पर उठाए गए। और सहाबा किराम आपको सज्दा करके बड़ी ख़ुशी से यरूशलेम को लौट गए। और हर वक़्त बैत-अल्लाह में हाज़िर हो कर परवरदिगार की हम्द किया करते थे।" (लूक़ा 24:50 ता 53)

इन्जील के सलीबी वाक़ियात व क़ुर्आन

ये हैं इंजीली वाक़ियात जिनको क़ुर्आन-ए-पाक ने अपने तर्ज़ पुर-मग़ज़ में इन दो जुमलों में बयान किया है कि, يٰعِيْسٰٓى اِنِّيْ مُتَوَفِّيْكَ وَرَافِعُكَ اِلَيَّ (सूरह आले-इमरान आयत 55) लेकिन हमारे करम फ़र्मा ने चूँकि इन्जील जलील को बचश्म ख़ुद मुलाहिज़ा नहीं फ़रमाया है ये एतराज़ करते हैं कि "आम तौर पर ये ख़याल किया जाता है कि सलीब पर चढ़ाना ये मअनी रखता है कि इन्सान यक़ीनन और फ़ौरन मर जाता है।" आपका ये कहना तो सरीहन कम फ़हमी का नतीजा है कि इन्सान "यक़ीनन" नहीं मरता था। क्योंकि अगर वो "यक़ीनन" नहीं मरता था तो सलीब देना ही फ़ेअले अबस था। अलबत्ता आपका ये कहना कि "फ़ौरन" नहीं मरता था "इस हद तक" सही है जहां तक वाक़ियात का इक़तिज़ा (तक़ाज़ा) हो। अज़-बस कि नक़्क़ाली जनाब की तबीयत सानी बन चुकी है आप वही कुछ लिखते हैं जो आपके उस्ताद-ए-अज़ल सर सय्यद मर्हूम लिख चुके हैं। काश आप ख़ुद तहक़ीक़ात की ज़हमत बर्दाश्त करते तो आपको मालूम हो जाता कि सलीब की सिर्फ वही हैयत नहीं है जिसको आपने सर सय्यद मर्हूम की **"तफ़्सीर-उल-क़ुर्आन"** से नक़्ल किया है बल्कि इस की तीन मुख़्तलिफ़ हैय्यतें थीं जिनकी रसूम ये हैं :-

इसी तरह शख़्स मस्लूब की भी तीन सूरतों होती थीं **(1)** शख़्स मस्लूब को सलीब की नशिस्त पर लटका कर उस के हाथों और दोनों पांव को अलैहदा-अलैहदा एक पांव को दुसरे पर रखकर रस्सियों से ख़ूब मज़्बूत बांध देते थे। इस सूरत में शख़्स मस्लूब की मौत तमाज़त-ए-आफ़्ताब या दीगर मौसमी असरात और गिरस्नगी

व तशनगी की वजह से चंद यौम के बाद वाक़ेअ होती थी। **(2)** शख़्स मस्लूब के दोनों हाथों को सलीब के दोनो बाज़ुओं पर फैला कर बड़े बड़े कीलों से जड़ देते थे और पाओं को रस्सी से बांध देते थे। चूँकि इस सूरत में ज़ख़्मों की तक्लीफ़ के इलावा ख़ून भी जारी रहता था शख़्स मस्लूब की मौत निस्बत अव्वल जिल्द वाक़ेअ होती थी। **(3)** शख़्स मस्लूब के हाथों के इलावा उस के पांव भी गाहे अलैहदा-अलैहदा और गाहे एक साथ कीलों से जड़ देते थे। इस सूरत में जरयान-ए-ख़ून की शिद्दत, ज़ख़्मों की उफ़ूनत, और मस्मूम-उल-दम (ज़हर दिया गया, सांस की दुशवारी) होने की वजह से शख़्स मस्लूब बहुत जल्द ही मरता था। (हज़रत ईसा की सलीब की आख़िरी सूरत थी और पर्दा दिल का शिगाफ़ इस पर इज़ाफ़ा था।) (लुगात बाइबल अज़ तस्नीफ़ जान डी॰ डेविस साहब अंग्रेज़ी वांडेन चर्च कामंटरी इन्जील मत्ती अंग्रेज़ी) ख़ुद इस वाक़िये से भी जिसको सर सय्यद मर्हूम ने अपनी "तफ़्सीर-उल-क़ुर्आन" में नक़्ल किया है इस की तस्दीक़ हो जाती है कि सलीबी ज़ख़्म निहायत ख़तरनाक होते थे और फ़ील-फ़ौर उतारने और बाक़ायदा ईलाज मुआलिजा करने के बावजूद मुश्किल से किसी की जान बचती थी। चुनान्चे यूसेबस से तीन रफ़ीक़ों में से जिनको उसने सलीब से उतरवाया दो मर गए और ब मुश्किल जांबर हो सका। हालाँकि हज़रत ईसा की तकालीफ़ में और उनकी तकालीफ़ में कोई निस्बत ना थी।

हज़रत रूह-उल्लाह की तकालीफ़

अनाजील की इन रिवायत से जिनको हमने ऊपर नक़्ल किया है और नीज़ दीगर मुक़ामात से साफ़ ज़ाहिर है कि हज़रत ईसा को (3) शबाना रोज़ तक ना सोने के लिए वक़्त दिया गया और ना खाने पीने के लिए फ़ुर्सत दी गई और ना सांस लेने के लिए मोहलत दी गई। बल्कि इस असना में चार बार निहायत बेदर्दी के साथ आपको पिटवाया गया। जिसका ख़ातिमा रूमी ताज़ियाना पर हुआ। जिसकी साख़त के मुताल्लिक़ मौअर्रखीन ने लिखा है कि :-

> "वो चमड़े की एक लंबी थैली होती थी जिसके अंदर लोहे की नोकदार कीलें, और सीसे के नाहमवार टुकड़े, और हड्डियों के रेज़े और इस क़िस्म की दीगर अश्या भर दी जाती थीं। इन्सान को ब्रहना करके इस से दुर्रे लगवाते थे। इन्सान के जिस्म पर जहां कहीं ये पड़ता था वहां का गोश्त अलैहदा हो

> कर हड्डी दिखाई देती थी। और बाज़ औक़ात सिर्फ इसी की ज़र्ब से मौत वाक़ेअ होती थी।"

(माडर्न स्टूडैंटस लाईफ़ आफ़ क्राइस्ट, अज़ तस्नीफ़ वालमर साहब सफ़ा 255)

डीनफ़र साहब अपनी मशहूर आफ़ाक़ किताब "लाईफ़ आफ़ क्राइस्ट" में लिखते हैं कि :-

> "इस वहशत ज़ाताज़्याना का नमूना इस तहज़ीब के ज़माने में सतह ज़मीन पर कहीं नहीं मिल सकता है। बजुज़ रूसी गिरहदार ताज़ियाना के। इस के इलावा आपके सर-ए-मुबारक पर जो पहले बहुत कुछ ज़ख़्मी हो चुका था कांटों का ताज बाँधा गया। ज़ोफ़ व नातवानी की ये हालत थी कि अपनी सलीब तक नहीं उठा सकते थे जिसको एक मामूली ताक़त वाला शख़्स ब-आसानी उठा सकता था। सलीब पर आपके दोनों हाथों और पांव में बड़े-बड़े कील ठोंके गए। बारह (12) या नो (9) घंटों तक आप सलीब पर आवेज़ां रहे और बिल-आख़िर आपकी पिसली ऐन दिल पर भाले से शक़ कर दी गई। ये अस्बाब थे जिनकी वजह से हज़रत ईसा की मौत नौ (9) या बारह (12) घंटों के बाद वाक़ेअ हुई।"

इन वाक़ियात के पढ़ने के बाद बजुज़ उस शख़्स के जो बेदर्द बेरहम, ज़ालिम, और अक़सी-उल-क़ुलूब वाक़ेअ हो और कोई शख़्स हज़रत रूह-उल्लाह की उजाली (जल्दी) मौत पर ताज्जुब नहीं कर सकता है। बल्कि वो इस पर ताज्जुब करेगा कि इस क़द्र आलाम और मसाइब के झेलने के बाद किस तरह 9 या 12 घंटों तक सलीब पर ज़िंदा रहे।

आपका ये फ़रमाना कि "आप पर शिद्दत तक्लीफ़ से ग़शी की सी कैफ़ीयत तारी थी और सबने ग़लती से ये समझ लिया कि आप मर गए।" रूमी सल्तनत के क़वानीन से नावाक़िफ़ होना और यहूदीयों की संगदिली से बे-ख़बर होने का नतीजा है। भला किसी की समझ में ये बात आ सकती है कि यहूदीयों के से दुश्मन जो मसीह का ख़ून पीने के लिए माही बे-आब (पानी के बग़ैर मछली) की तरह तड़प रहे थे। ये ग़फ़लत करें कि मसीह ज़िंदा उतार लिए जाएं। भला रूमी सिपाही जो इस क़ानून से

ख़ूब वाक़िफ़ थे कि शख़्स मस्लूब के ज़िंदा उतारने में कैसी सख़्त सज़ा मिलेगी। ये ग़लती कर सकते थे? हज़रत इसी ग़लती से बचने की ख़ातिर एक सिपाही ने बजाए टांग तोड़ने के मसीह की पिसली पर कारी ज़ख़्म लगाया ताकि हज़रत ईसा की मौहूम ग़शी की सी कैफ़ीयत फ़ील-फ़ौर मौत से तब्दील हो जाएगी।

चंद जलील-उल-क़द्र मुसलमान भी हमसे मुत्तफ़िक़ हैं

बिल-जुम्ला क़ुर्आन-ए-पाक और इन्जील-ए-जलील दोनों इस पर मुत्तफ़िक़ हैं कि फ़िल-हक़ीक़त ख़ुदा ने मसीह को पहले मौत दी और इस के बाद उनको ज़िंदा करके ब-जसद अंसरी (जिस्म के साथ) आस्मान पर उठा लिया। चुनान्चे जलील-उल-क़द्र और माया नाज़ मुसलमान भी हमसे मुत्तफ़िक़ हैं। चुनान्चे वहब का ये क़ौल है कि :-

> “हज़रत ईसा तीन घंटे तक मुर्दा रहे और फिर ज़िंदा हो कर आस्मान पर चले गए।”

और मुहम्मद इब्ने इस्हाक़ का क़ौल है कि :-

> “आप सात (7) घंटे तक मुर्दा रहे। फिर ज़िंदा हुए और आस्मान पर चले गए।”

और रबीअ इब्ने अनस का क़ौल है कि :-

> “अल्लाह तआला ने आस्मान पर उठाते वक़्त आपको मौत दी।”

(सर सय्यद मर्हूम की तफ़्सीर-उल-क़ुर्आन बहवाला तफ़्सीर कबीर सूरह आले-इमरान)

आयत وَمَاقَتَلُوْهُوَمَاصَلَبُوْهُ की मसीहयाना तफ़्सीर

अब इस सवाल का जवाब देना बाक़ी रह गया कि अगर हमारे ख़यालात दुरुस्त हैं तो (सूरह अल-निसा आयत 157) **مَاقَتَلُوْهُوَمَاصَلَبُوْهُ** की क्या तफ़्सीर हो सकती है जिसमें मस्लुबियत की मुतलक़ नफ़ी की गई है इस का जवाब निहायत सहल है वो ये कि हम हज़रत नियाज़ (और दर-हक़ीक़त सर सय्यद मर्हूम) के इस क़ौल के साथ बिल्कुल मुत्तफ़िक़ हैं कि इस आयत में अस्ल मक़्सूद या नतीजा सलीब

की नफ़ी की गई है ना कि सलीब पर चढ़ाने की। लेकिन नतीजे के तअय्युन करने में हमको हज़रत नियाज़ से इख़्तिलाफ़ है। हज़रत नियाज़ सर सय्यद मर्हूम की तक़्लीद में फ़र्माते हैं कि सलीब का नतीजा मौत था। और हम कहते हैं कि नहीं जनाब। अगर यहूदीयों को हज़रत मसीह को सिर्फ मार डालना ही "मक़्सूद" होता तो आपको मार डालने के और बहुत से तरीक़े थे और निहायत सहूलत के साथ उन तरीक़ों को इस्तिमाल कर सकते थे। लेकिन सलीब देने पर उनको क्यों इस क़द्र इसरार था कि "इस को सलीब दे सलीब दे।" जिससे यहूदीयों का "अस्ल मक़्सूद ये मालूम होता है कि हज़रत मसीह को तौरात मुक़द्दस की इस आयत का कि "अगर किसी ने कुछ ऐसा गुनाह किया हो जिससे उस का क़त्ल वाजिब हो और वह मारा जाये और तू उसे दरख़्त पर लटकाए। तो उस की लाश रात भर दरख़्त पर लटकी ना रहे बल्कि तू उसी दिन उसे गाड़ दे क्योंकि वो जो फांसी दिया जाता है ख़ुदा का मलऊन है।" (इस्तिस्ना बाब 21 आयात 22 ता 23)

मिस्दाक़ बना के आपकी नब्वी अज़मत और वक़ार को सदमा पहुंचा कर आपका मआज़ अल्लाह "मलऊन" साबित करें ताकि आपका मर्फ़ूअ इलल्लाह होना मुतअज़्ज़िर (दुशवार) समझा जाये। पस यहूदीयों के नज़्दीक सलीब का "नतीजा" सिर्फ क़त्ल ही नहीं था बल्कि क़त्ल बिल-लग़त था। इसी नतीजे की तर्दीद में अल्लाह फ़रमाता है कि :-

مَا لَهُمْ بِهٖ مِنْ عِلْمٍ اِلَّا اتِّبَاعَ الظَّنِّ ۚ وَمَا قَتَلُوْهُ يَقِيْنًا ﴿۱۵۷﴾ بَلْ رَّفَعَهُ اللّٰهُ اِلَيْهِ ۚ

(सूरह निसा 157-158)

तर्जुमा : "यानी यहूदीयों का मसीह के मुताल्लिक़ ये कहना कि हमने उस को लानत की मौत मारा ये उन की ख़ाम-ख़याली है क्योंकि दर-हक़ीक़त उन्हों ने उस को लानत की मौत नहीं मारा बल्कि ख़ुदा ने उस को ज़िंदा करके अपनी तरफ़ उठा लिया।"

सिर्फ क़ुर्आन मजीद ही ने यहूदीयों के इस कुफ़्र आमेज़ क़ौल की तर्दीद नहीं की है कि बल्कि मुक़द्दस पौलुस ने भी उनके इस नापाक क़ौल की तर्दीद की कि "पस मैं तुम्हें जताता हूँ कि जो कोई ख़ुदा की रूह की हिदायत से बोलता है वो नहीं कहता कि येसू मलूऊन है और ना कोई रूह-उल-क़ुद्स के बग़ैर कह सकता है कि येसू ख़ुदावंद है।" (1 कुरिन्थियों 12:3)

पस आयत बाला का सही तर्जुमा ये है कि "यहूदीयों ने जिस नतीजे को मद्द-ए-नज़र रखकर मसीह को मस्लूब किया इस नतीजे के एतबार से ना तो उन्होंने उस को मस्लूब किया और ना मक़्तूल किया बल्कि ख़ुदा ने उस को ब-जसद अंसरी (जिस्म समेत) निहायत इज़्ज़त के साथ अपनी तरफ़ उठा लिया।"

उलमा-ए-अहले-सुन्नत वल-जमाअत से ख़िताब

मुसलमान बुज़र्ग़ों और क़ाबिल-ए-ताज़ीम आलिमो ! अगर आप हमारी तफ़्सीर माफ़ौक़ को जो क़ुर्आन-ए-मजीद और इन्जील-ए-जलील के ऐन मुताबिक़ है क़ुबूल ना करें तो याद रखें कि क़ुर्आन-ए-मजीद पर ऐसा संगीन एतराज़ वारिद होता है जो आपके उठाए ना उठ सकेगा। हम इस एतराज़ को मौलवी मुहम्मद अली साहब अमीर जमाअत अहमदिया लाहौर की एक बात से उन्ही के अल्फ़ाज़ में नक़्ल करते हैं वो ये है कि :-

> "क़ुर्आन-ए-करीम के अल्फ़ाज़ के हम को ऐसे मअनी नहीं करने चाहिऐं जो बिल-बदाहत (हक़ीक़त की रू से) तारीख़ को बातिल करते हों। ये मुम्किन है कि कोई शख़्स सिर्फ उसी क़द्र अल्फ़ाज़ مَا قَتَلُوْهُ وَمَا صَلَبُوْهُ से ये नतीजा निकाल ले कि क़त्ल की मानिंद या सलीब की मानिंद भी कोई फ़ेअल हज़रत मसीह पर वारिद नहीं हुआ। लेकिन ये नतीजा लाज़िमी नहीं। और जब हम तारीख़ में इस अम्र को देखते हैं कि एक तरफ़ यहूदी मुद्दई हैं कि हमने मसीह को पकड़ कर सलीब पर चढ़ाया। और दूसरी तरफ़ ईसाई जो हज़रत मसीह के पैरौ (मानने वाले) हैं वो इस बात की गवाही देते हैं कि वाक़ई सलीब पर हज़रत मसीह को लटकाया और कोई तारीख़ उस वक़्त की ऐसी नहीं जिससे ये मालूम हो कि हज़रत मसीह सलीब पर नहीं चढ़ाए गए। अब अगर एक शख़्स छः सौ (600) साल के बाद ये कह दे कि नहीं वो सलीब पर नहीं लटकाए गए थे तो इस बात को कौन मानेगा? क़ुर्आन-ए-करीम के मअनी करने में ये अम्र मल्हूज़ रखा जाएगा कि अगर एक लफ़्ज़ के दो तरह मअनी हो सकते हैं तो हम वही मअनी इख़्तियार करेंगे जो तारीख़ के ख़िलाफ़ नहीं।"

(ईस्वीयत का आख़िरी सहारा सफ़ा 17)

जमाअत अहमदिया और उनके हम-ख़यालों से ख़िताब

मेरे मुहतरम बुज़र्गो यही एतराज़ बाला आप पर भी वारिद होता है कि हज़रत मसीह के मस्लूब होने के तो आप क़ाइल हैं लेकिन आपकी सलीबी मौत के क़ाइल नहीं हैं। क्योंकि "जब हम तारीख़ में इस अम्र को देखते हैं कि एक तरफ़ यहूदी मुद्दई हैं कि हमने मसीह को पकड़ कर सलीब पर चढ़ा कर मार डाला और दूसरी तरफ़ हम मसीही जो हज़रत मसीह के पैरौ (मानने वाले) हैं इस बात की गवाही देते हैं कि वाक़ई सलीब पर आप फ़ौत हुए।" और कोई तारीख़ उस वक़्त की ऐसी नहीं है जिससे ये मालूम हो कि हज़रत मसीह सलीब पर फ़ौत नहीं हुए। अब अगर एक शख़्स छः सौ (600) साल बाद ये कह दे कि नहीं वो सलीब पर नहीं फ़ौत हुए तो इस बात को कौन मानेगा? पस हज़रत मसीह के मस्लूब होने को सही तस्लीम करके आपके सलीबी मौत से इन्कार करना ऐसा ही है जैसा मीनः (बरसात) से बचने की ख़ातिर परनाले के नीचे खड़ा हो जाना। فتفکرویااولی الالباب

हिस्सा सोम

मोअ़जज़ात-ए-मसीह

أَنِّي قَدْ جِئْتُكُمْ بِآيَةٍ مِّن رَّبِّكُمْ

आप अपने मज़्मून ज़ेरे तन्क़ीद के तीसरे हिस्से में तहरीर फ़र्माते हैं कि :-

> तीसरा हिस्सा इस बह्स का मसीह के मोअजज़ात से मुताल्लिक़ है। सबसे पहला मोअजिज़ा तो ये है कि आपने गहवारे में गुफ़्तगु की। इस के मुताल्लिक़ हम कोई मज़ीद बह्स ना करेंगे। क्योंकि गुज़श्ता सफ़हात में हम इस हक़ीक़त को वाज़ेह कर चुके हैं। और गहवारा से बात करने का मफ़्हूम सगर सनी (बचपन) में बात करने का है और ये कोई मोअजिज़ा नहीं। बाक़ी और मोअजज़ात वो हैं जिनका ज़िक्र (सूरह माइदा और आले-इमरान) में है। वो आयतें ये हैं :-

أَنِّي قَدْ جِئْتُكُمْ بِآيَةٍ مِّن رَّبِّكُمْ أَنِّي أَخْلُقُ لَكُم مِّنَ الطِّينِ كَهَيْئَةِ الطَّيْرِ فَأَنفُخُ فِيهِ فَيَكُونُ طَيْرًا بِإِذْنِ اللَّهِ وَأُبْرِئُ الْأَكْمَهَ وَالْأَبْرَصَ وَأُحْيِي الْمَوْتَىٰ بِإِذْنِ اللَّهِ وَأُنَبِّئُكُم بِمَا تَأْكُلُونَ وَمَا تَدَّخِرُونَ فِي بُيُوتِكُمْ ۚ إِنَّ فِي ذَٰلِكَ لَآيَةً لَّكُمْ إِن كُنتُم مُّؤْمِنِينَ

(सूरह आले-इमरान 49)

> तर्जुमा : “मैं लाया हूँ निशानी तुम्हारे रब की तरफ़ से। मैं बनाता हूँ तुम्हारे लिए मिट्टी से ताइर की सूरत में। फिर फूँकता हूँ इस में। बस वो हो जाता है ताइर अल्लाह के हुक्म से। और अच्छा करता हूँ अंधे को, कौड़ी को और जिलाता हूँ मुर्दा को अल्लाह के हुक्म से और ख़बरदार करता हूँ जो तुम

खाते हो और जो घरों में बचाते हो। तहक़ीक़ कि इस में निशानी है तुम्हारे लिए अगर तुम ईमान लाने वाले हो।"

اِذْ قَالَ اللّٰهُ يٰعِيْسَى ابْنَ مَرْيَمَ اذْكُرْ نِعْمَتِيْ عَلَيْكَ وَ عَلٰى وَالِدَتِكَ اِذْ
اَيَّدْتُّكَ بِرُوْحِ الْقُدُسِ تُكَلِّمُ النَّاسَ فِي الْمَهْدِ وَ كَهْلًا وَ اِذْ عَلَّمْتُكَ
الْكِتٰبَ وَ الْحِكْمَةَ وَ التَّوْرٰىةَ وَ الْاِنْجِيْلَ وَ اِذْ تَخْلُقُ مِنَ الطِّيْنِ كَهَيْـَٔةِ
الطَّيْرِ بِاِذْنِيْ فَتَنْفُخُ فِيْهَا فَتَكُوْنُ طَيْرًا بِاِذْنِيْ وَ تُبْرِئُ الْاَكْمَهَ وَ الْاَبْرَصَ
بِاِذْنِيْ وَ اِذْ تُخْرِجُ الْمَوْتٰى بِاِذْنِيْ وَ اِذْ كَفَفْتُ بَنِيْۤ اِسْرَآءِيْلَ عَنْكَ اِذْ جِئْتَهُمْ
بِالْبَيِّنٰتِ فَقَالَ الَّذِيْنَ كَفَرُوْا مِنْهُمْ اِنْ هٰذَاۤ اِلَّا سِحْرٌ مُّبِيْنٌ

(सूरह माइदा आयत 110)

तर्जुमा : "जब कहेगा अल्लाह ऐ ईसा इब्ने मर्यम याद कर मेरी नेअमत को अपने ऊपर और अपनी माँ के ऊपर जब मैंने मदद की तेरी रूह-उल-क़ुद्स के ज़रीये से। तूने बात की और लोगों से गहवारे में और बुढ़ापे में जब मैंने सिखाई तुझको किताब, हिक्मत, तौरेत और इन्जील, और जब बनाया तूने मिट्टी से ताइर की सूरत में मेरे हुक्म से और अच्छा किया तूने अंधे को कौड़ी को मेरे हुक्म से और जब तूने निकाला मुर्दे को मेरे हुक्म से और जब मैंने बाज़ रखा बनी-इस्राईल को तुझसे जब कि तू उनके पास खुली हुई दलीलें लाया। लेकिन वो काफ़िरों ने कहा ये खुला हुआ जादू है।"

اِذْ قَالَ الْحَوَارِيُّوْنَ يٰعِيْسَى ابْنَ مَرْيَمَ هَلْ يَسْتَطِيْعُ رَبُّكَ اَنْ يُّنَزِّلَ
عَلَيْنَا مَآئِدَةً مِّنَ السَّمَآءِ ؕ قَالَ اتَّقُوا اللّٰهَ اِنْ كُنْتُمْ مُّؤْمِنِيْنَ قَالُوْا
نُرِيْدُ اَنْ نَّاْكُلَ مِنْهَا وَ تَطْمَئِنَّ قُلُوْبُنَا وَ نَعْلَمَ اَنْ قَدْ صَدَقْتَنَا وَ نَكُوْنَ
عَلَيْهَا مِنَ الشّٰهِدِيْنَ قَالَ عِيْسَى ابْنُ مَرْيَمَ اللّٰهُمَّ رَبَّنَاۤ اَنْزِلْ عَلَيْنَا
مَآئِدَةً مِّنَ السَّمَآءِ تَكُوْنُ لَنَا عِيْدًا لِّاَوَّلِنَا وَ اٰخِرِنَا وَ اٰيَةً مِّنْكَ ۚ وَ ارْزُقْنَا

وَاَنۡتَ خَيۡرُ الرّٰزِقِيۡنَ قَالَ اللّٰهُ اِنِّىۡ مُنَزِّلُهَا عَلَيۡكُمۡ‌ۚ فَمَنۡ يَّكۡفُرۡ بَعۡدُ مِنۡكُمۡ فَاِنِّىۡۤ اُعَذِّبُهٗ عَذَابًا لَّاۤ اُعَذِّبُهٗۤ اَحَدًا مِّنَ الۡعٰلَمِيۡنَ

(सूरह माइदा आयत 112 ता 115)

तर्जुमा : "जब कहा हवारियों ने ऐ ईसा इब्ने मर्यम क्या तेरा रब ऐसा करेगा कि वो उतारे दस्तर ख़्वान आस्मान से। कहा उसने डरो अल्लाह से अगर तुम ईमान वाले हो। उन्होंने कहा कि हम चाहते हैं कि खाएं उस दस्तर-ख़्वान से और मुत्मइन हो जाएं हमारे क़ुलूब और हम जान लें कि बेशक तूने सच्च कहा है और हम इस पर गवाह हो जाएं। कहा ईसा इब्ने मर्यम ने ऐ मेरे परवरदिगार उतार हम पर दस्तर ख़्वान आस्मान से ताकि हो जाए हमारे लिए मसर्रत हमारे अगलों के लिए और पिछलों के लिए और निशानी तेरी तरफ़ से और हमें रोज़ी दे और तू बेहतर रोज़ी देने वाला है। कहा अल्लाह ने मैं उतारने वाला हूँ दस्तर-ख़्वान तुम्हारे ऊपर। लेकिन अगर कोई ना-फ़र्मानी करेगा इस के बाद तुम में से। तो उस को मैं ऐसा अज़ाब दूँगा कि आलम के लोगों में से किसी एक को वैसा अज़ाब ना दिया होगा।"

"सिवाए मोअजिज़ा नुज़ूल माइदा के और जितने मोअजज़ात बयान किए जाते हैं वो सब आले-इमरान और सूरह माइदा की आयतों में मुश्तर्क हैं यानी जो मोअजज़ात सूरह आल-ए-इमरान में बयान किए गए हैं उन्हीं का ज़िक्र सूरह माइदा में भी है। लेकिन फ़र्क़ अंदाज़-ए-बयान का ज़रूर है। आले इमरान में ख़ुद हज़रत ईसा अपनी ज़बान से इन का इज़्हार कर रहे हैं कि मैं ऐसा करता हूँ। ऐसा कर सकता हूँ। और सूरह माइदा में ख़ुदा अपनी नेअमतों के सिलसिले बयान में हज़रत ईसा पर ज़ाहिर करता है कि याद करो उस वक़्त को जब तुम हमारे हुक्म से ऐसा और ऐसा कर सकते थे। लेकिन चूँकि बातें दोनों जगह एक ही हैं इसलिए अलैहदा अलैहदा बहस

करने की ज़रूरत मालूम नहीं होती। इन आयतों से जिन मोअजज़ात का सबूत पेश किया जाता है वो ये हैं :-

(1) मिट्टी की चिड़िया बना कर हज़रत ईसा का उस के अंदर फूंक मारना और उस का उड़ जाना।
(2) अंधे कोढ़ीयों को अच्छा करना।
(3) मुर्दे को ज़िंदा करना।
(4) ग़ैब की ख़बर देना इस क़बील से कि लोग क्या खाते हैं और घरों में क्या रखते हैं।
(5) ईसा की दुआ पर आस्मान से दस्तर ख़्वान खाने का नाज़िल होना।

मोअजिज़ा अव्वल के मुताल्लिक़ बाअज़ मुफ़स्सिरीन का बयान है कि वाक़ई वो मिट्टी की चिड़िया बनाते थे और उनमें जान डाल देते थे। बाअज़ का ख़याल ये है कि जिनमें सर सय्यद मर्हूम भी शामिल हैं कि ये वाक़या हज़रत ईसा की अहद-ए-तिफ़्ली का है और बचपन में लड़के इस क़िस्म की बातें किया ही करते हैं। लेकिन मेरे नज़्दीक ये दोनों बातें समझ से बाहर हैं। वो इसलिए कि किसी जानदार शैय को पैदा करना या किसी चीज़ में जान डालना सिर्फ अल्लाह का काम है और यह इसलिए कि अगर मिट्टी की चिड़ियां बना कर उनमें जान डाल देने का वाक़िया सिर्फ उनके अहदे तिफ़्ली (बचपन) के मुताल्लिक़ होता तो ख़ुदा अपनी नेअमतों के सिलसिले बयान में इस का ज़िक्र करता जैसा कि सूरह माइदा की आयतों से ज़ाहिर होता है।

इन्जील का अगर बग़ौर मुतालआ किया जाये तो आसानी से ये बात समझ में आ जाती है कि हज़रत ईसा ने जहां-जहां जो कुछ इर्शाद फ़रमाया है वो सब क़िसस व हिकायात और अम्साल व तशबिहात की सूरत में बयान किया है। और मालूम होता है कि उस ज़माने के लिट्रेचर की यही शान थी इसलिए ग़ौर करना चाहिए कि लफ़्ज़ ख़ल्क़ से यहां क्या

मुराद है और नफ़ख़ के बाद ताइर की तरह उड़ना क्या मअनी रखता है।

ये अम्र ज़ाहिर है कि लफ़्ज़ ख़ल्क़ पैदा करने के मअनी में तो हो ही नहीं सकता क्योंकि मुतअद्दिद आयात कुरआनी से मालूम होता है कि ख़ल्क़ (पैदा करना) सिर्फ ख़ुदा का काम है और यह सिफ़त सिर्फ उसी के साथ मख़्सूस है। इसलिए इस जगह लफ़्ज़ ख़ल्क़ के मअनी सिर्फ़ अंदाज़ा करने या अज़म करने के हैं। (इस लफ़्ज़ के ये मअनी भी अरबी ज़बान में आते हैं) "तीन" (طین) (मिट्टी से) इन्सान की ज़ईफ़ पैदाइश की तरफ़ इशारा है। नफ़ख़ (نفخ) से मक़्सूद अहकाम इलाहिया की ताअलीम है। और तीर (طیر) से वो इन्सान मुराद हैं जो आम सतह इन्सानी से बुलंद हो जाएं।

कलामे मजीद में इन्सानों को दातबा (داتبہ) और ताइर (طائر) से तश्बीह दी गई है और (मुलाहिज़ा सूरह अनआम आयत 38) وَمَا مِنْ دَآبَّةٍ الخ इसी तरह ना समझ लोगों को जानवरों से ताबीर किया गया है (सूरह अनआम) इसलिए इस आयत के ये मअनी हुए कि तुम लोगों को जो मिट्टी से बने हो यानी अपनी पैदाइश के लिहाज़ से बहुत हक़ीर हो मैं ताइर (طائر) की सी हेईयत देने का अज़म करता हूँ और फिर ताअलीम इलाही देकर वाक़ई बुलंद परवाज़ और बुलंद ख़याल इन्सान बनाता हूँ।

अंधे, कौड़ी और मुर्दा से मुराद वो लोग हैं जिनकी रूहें बीमार और मुर्दा हैं। इन्जील में अक्सर जगह बीमार बोल कर गुनेहगार मुराद लिया गया है और वो ख़ुद कलाम मजीद में भी अँधों और मुर्दों से गुनेहगार और काफ़िर मुराद हैं। मसलन وَمَا يَسْتَوِي الْأَحْيَاءُ وَلَا الْأَمْوَاتُ (सूरह फ़ातिर आयात 22) इसलिए अंधे कोढ़ीयों को अच्छा करने और मुर्दों को ज़िंदा करने से मुराद यही है कि मैं गुनेहगारों से उनके गुनाह

छुड़ाता हूँ और जो रूहें मअसियत से मुर्दा हैं उनको अख़्लाक़ की ताअलीम देकर ज़िंदा करता हूँ।

मसीह की ख़ास ताअलीम ये थी कि जो कुछ तुम्हारे पास है उसे अल्लाह की राह में सर्फ कर दो और कल के लिए कुछ ना रखो। क्योंकि उनके ज़माने में लोग कस्रत से सूद-ख्वार थे और घरों में दौलत जमा रखते थे। ख़्वाह क़ौम पर कोई आफ़त आ जाए। इसी अम्र की तरफ़ इशारा है इन अल्फ़ाज़ से, وَأُنَبِّئُكُمْ بِمَا تَأْكُلُونَ وَمَا تَدَّخِرُونَ तर्जुमा : "यानी मैं तुमको बताता हूँ या तंबीया करता हूँ कि तुम कितना और क्या खाते हो और क्या जमा करते हो।" मेरी समझ में नहीं आता कि इस आयत से अख़्बार-अन-उल-गैब क्योंकर समझ लिया गया।

अब रहा माईदा का आस्मान से नाज़िल होना। सो कलाम मजीद से ये बात साबित नहीं होती कि माईदा नाज़िल किया गया है। अलबत्ता ईसा से हवारियों ने इस की ख़्वाहिश की थी। और आपने दुआ भी की थी लेकिन इस के बाद उस का कहीं ज़िक्र नहीं है कि माईदा उतारा गया। इलावा इस के माईदा से यहां मुराद वाक़ई खाने का दस्तर ख़्वान नहीं है। बल्कि मक़्सूद सिर्फ़ रोज़ी है और ईसा की ये दुआ इसी क़बील से थी जैसी कि इन्जील में पाई जाती है कि "ऐ ख़ुदा आज के दिन की हमारी ख़ुराक दे।"

माईदा की इन आयतों से सिर्फ ये साबित होता है कि हवारियों ने वुसअत-ए-रिज़्क़ तलब की थी और इसी की दुआ हज़रत ईसा ने की थी। सो उस के मक़्बूल होने का सबूत आजकल ईसाईयों की दुनियावी तरक़्क़ी से मिल सकता है।"

बहस-ए-माफ़ौक़ का मलहज़

बहस-ए-माफ़ौक़ को अच्छी तरह समझने के लिए इस का मलहज़ पेश करना नामुनासिब ना होगा जो क़रार ज़ेल है :-

(1) हज़रत ईसा ने जहां-जहां जो कुछ इर्शाद फ़रमाया है वो सब क़िसस व हिकायात और अम्साल व तशबिहात की सूरत में बयान किया है। लिहाज़ा :-

(2) लफ़्ज़ ख़ल्क़ (خلق) से मुराद अंदाज़ा करने या अज़म करने के हैं। तीन (طین) से इन्सान की ज़ईफ़ पैदाइश की तरफ़ इशारा है। नफ़ख़ (نفخ) से मक़्सूद अहकाम इलाहिया की ताअलीम है। और तीर (طیر) से वो इन्सान मुराद हैं जो आम सतह इन्सानी से बुलंद हो जाएं।

(3) وَأُنَبِّئُكُم بِمَا تَأْكُلُونَ وَمَا تَدَّخِرُونَ से अख़्बार अन अल-गैब मुराद नहीं।

(4) माईदा से मुराद तलब-ए-रिज़्क़ है जिसके मक़्बूल होने का सबूत आजकल ईसाईयों की दुनियावी तरक़्क़ी से मिल सकता है।

(5) अंधे कौड़ी और मुर्दा से मुराद वो लोग हैं जिनकी रूहें बीमार और मुर्दा हैं।

हमें फिर वही कहना पड़ा जो इस से क़ब्ल चंद-बार दुहरा चुके हैं। यानी आपके मज़्मून का ये हिस्सा भी जनाब की तराविश क़लम का नतीजा नहीं है बल्कि इब्तिदा से लेकर इंतिहा तक सब मौलवी मुहम्मद अली साहब अमीर जमाअत अहमदिया लाहौर के **"निकात-उल-क़ुर्आन"** से माख़ूज़ है। चुनान्चे आप लिखते हैं कि :-

> "इलावा अज़ीं ये भी याद रखने के क़ाबिल बात है कि हज़रत मसीह के कलाम में मजाज़ व इस्तिआरे का इस्तिमाल बहुत पाया जाता है और आपके कलाम का एक बड़ा हिस्सा तम्सीलात में है।"

(निकात-उल-क़ुर्आन हिस्सा सोम सफ़ा 237)

अलबत्ता इस इबारत में आपने ये जिद्दत-ए-तराज़ी की है कि जहां मौलवी साहब मज़्कूर अल-सदरी ने एक "बड़ा हिस्सा" लिखा है वहां आपने ये लिखा है कि "हज़रत ईसा ने जहां-जहां जो कुछ इर्शाद फ़रमाया है। सब क़िसस व हिकायात और अम्साल व तशबिहात की सूरत में बयान किया है।" जिससे साफ़ ज़ाहिर होता है कि आपने इन्जीले जलील देखी नहीं है। आपकी शान में सर सय्यद मर्हूम की ये तम्सील क्या ही सादिक़ आती है कि :-

> “उनकी (हज़रत नियाज़ जैसे लोगों की) मिसाल अंधे आदमी की सी है कि वो उस रस्ते पर जो उस को किसी ने बतला दिया है चला जाता है और उस के ठीक होने पर यक़ीन रखता है और ख़ुद नहीं जानता है कि दर-हक़ीक़त ये रस्ता उसी जगह जाता है जहां उस को जाना है या नहीं। फिर अगर किसी ने कह दिया कि मियां अंधे आगे गढ़ा है या दीवार है तो वो बग़ैर किसी शक किए उस पर यक़ीन कर लेता है और ठहर जाता है। फिर जिसने राह बताई उस तरफ़ हो लिया।”

(तफ़्सीर-उल-क़ुर्आन आले-इमरान सफ़ा 46)

चारों इंजीलें ज़्यादा से ज़्यादा चार पैसों के मुआवज़े में आप को मिल सकती थीं अगर अहमदियत की इस कोराना तक़्लीद को छोड़कर आप ख़ुद उनका मुतालआ करते तो आपको इस क़द्र फ़ज़ीहत और रुस्वाई से साबिक़ा ना पड़ता, लेकिन जिस ने कहा है बजा कहा है कि “अँधों की अगर आँखें होतीं तो उनको शर्म भी मालूम होती है।”

लीजिए जनाब ! अब मैं आपको बतलाता हूँ कि जहां-जहां हज़रत ईसा ने जो कुछ भी क़िसस व हिकायात और अम्साल व तशबिहात की सूरत में बयान किया है उन सबकी तादाद (26) से ज़्यादा नहीं है जिसको हम आपकी ख़ुशनुदी की ख़ातिर (30) बल्कि (40) फ़र्ज़ कर लेते हैं। अब अगर आप इन “तीस या चालीस” अम्साल व तश्बिहात को अनाजील की बाक़ी ताअलीमात से मुक़ाबला करें तो आप पर रोशन हो जाएगा कि इनमें वो निस्बत भी नहीं है जो नमक को आटे के साथ है। पस जिस तरह आपका ये कहना ग़लत है कि हज़रत ईसा ने जहां-जहां जो कुछ इर्शाद फ़रमाया है वो सब क़िसस व हिकायात और अम्साल व तश्बिहात की सूरत में बयान किया है। “इसी तरह आपके इमाम-ए-इल्हाम का ये कहना भी ग़लत है कि “आपके (हज़रत ईसा) के कलाम का एक बड़ा हिस्सा तम्सीलात में है।”

अब मैं इस पर एक और नुक़्ता-ए-नज़र से बहस करूँगा और यह कि मैं तक़िद मआब और उन के शागिर्द रशीद हज़रत नियाज़ से ये पूछता हूँ कि वो मुझे ये बतलाएं कि अगर में ये फ़र्ज़ करूँ कि “हज़रत ईसा के कलाम का एक बड़ा हिस्सा तम्सीलात में है।” और आप के कलाम में मजाज़ और इस्तआरे का इस्तिमाल बहुत पाया जाता है तो क्या इस से ये लाज़िम आता है कि हज़रत ईसा ने जहां-जहां जो

कुछ इर्शाद फ़रमाया है "वो सब क़िसस व हिकायात और अम्साल व तश्बिहात की सूरत" में बयान किया है। अगर आप इस सवाल का जवाब इस्बात (हाँ) की सूरत में दें तो फिर वो क़ुर्आन की निस्बत आप क्या कहेंगे? क्योंकि क़ुर्आन मजीद में जिस क़द्र क़िसस वहिकायात और अम्साल तशबीहात व मजाज़ व इस्तिआरा भरे पड़े हैं जिनका अश्र-ए-अशीर (कम हिस्सा) भी अनाजील में मौजूद नहीं है। और अगर आप इस का जवाब नफ़ी में दें तो गोया कि ख़ुद आप ने भी अपनी इस ताबीर के ग़लत होने पर मुहर कर दी कि हज़रत ईसा का मोअजिज़ा "ख़ल्क़-उल-तीर (خلق الطیر) इस्तिआरे के रंग का कलाम है।

अगरचे उसूली और इज्माली तौर पर आपके मज़्मून के इस तीसरे हिस्से का मुकम्मल जवाब हो चुका मज़ीद बहस की मुतलक़ ज़रूरत नहीं रही लेकिन सिर्फ इसलिए कि आपके दिल में कोई अरमान बाक़ी ना रह जाये हम आपकी बाक़ी शक़ों पर भी बहस करेंगे।

(ब) इस शक़ में आपने तक़द्दुस मआब मौलवी मुहम्मद अली साहब के ख़यालात का जो ख़ाका उतारा है इस से मालूम होता है कि आप ना सिर्फ अरबियत से बे-बहरा हैं बल्कि क़ुर्आन पाक की इज़्ज़त व अज़मत से भी महरूम हैं। आपकी दियानत और अमानत की ये कैफ़ीयत है कि बग़ैर इस के कि आप क़ुर्आन पाक का मंशा दर्याफ़्त करें। सियाक़ व सबाक़ का ख़याल रखें। इल्म उसूले तफ़ासीर, और अरबी इल्म-उल-लिसान की तरफ़ रुजू करें। या किसी माहिर ज़बान दान से मश्वरा लें जो कुछ तक़द्दुस मआब के क़लम से निकलता है उस पर आप का ऐसा ऐम मुस्तहकम हो जाता है कि फिर वो किसी सूरत से मुतज़लज़ल नहीं हो सकता है ख़्वाह इस से क़ुर्आन पाक की कितनी बेईज़्ज़ती ही क्यों ना हो। दर-हक़ीक़त आपके मुक़तदी जनाब तक़द्दुस मआब ने क़ुर्आन-ए-मजीद के साथ वही किया है जो दयानंद जी ने वेदों के साथ किया था। काश ख़ुदा आपको क़ुर्आन फ़हमी की तौफ़ीक़ अता फ़रमाए। आमीन

क़िब्ला ! किसी लफ़्ज़ के मुताल्लिक़ ये कहना कि इस से ये मुराद, वो मुराद है निहायत आसान है जिस तरह मेरे लिए ये कहना निहायत सहल है कि "नियाज़"[7]

---

[7] नियाज़ और प्याज़ में सनअत तबादला अल-रासीन है। यानी अगर नियाज़ के नून को प्याज़ के पै की जगह रख दें तो प्याज़ नियाज़ होगा और अगर प्याज़ की पै को नियाज़ के नून की जगह रख दें तो नियाज़ प्याज़ हो जाएगा। (सुलतान)

से मुराद “प्याज़” है। लेकिन इस को साबित करना बेहद मुश्किल है और इस से भी ज़्यादातर मुश्किल इस का साबित करना है कि “तीन” (طین) से इन्सान की ज़ईफ़ पैदाइश की तरफ़ इशारा है।” और नफ़ख़ (نفخ) से मक़्सूद अहकाम इलाहिया की ताअलीम है। और “तीर” (طیر) से वो इन्सान मुराद है “जो आम सतह इन्सानी से बुलंद हो जाएं अगर आयत ज़ेरे बहस में यही तीन अल्फ़ाज़ होते तो आपकी तावील की गुंजाइश का इम्कान होता लेकिन इस में ऐसे जुम्ले हैं जो आपकी कश्ती मुराद को ना मुरादी के साहिल पर पाश-पाश कर देने के लिए काफ़ी हैं वो ये हैं, (1) اَنِّىۡ قَدۡ جِئۡتُكُمۡ بِاٰيَةٍ (2) كَهَيۡـئَةِ الطَّيۡرِ (3) بِاِذۡنِ اللّٰهِ

जुम्ला अव्वल में लफ़्ज़ आयत मौजूद है जिसको तमाम बड़े-बड़े मुफ़स्सिरीन ने बिल-इत्तिफ़ाक़ ब मअना-ए-मोअजिज़ा तस्लीम किया है। और दर-हक़ीक़त यहां पर इस के मअनी बजुज़ मोअजिज़े के और कुछ नहीं हो सकते हैं।

अगर जनाब का ये फ़रमाना सही होता कि “तीर” (طیر) से मुराद “इन्सान की बुलंद परवाज़ी” है तो **जुम्ला दुवम** का होना हशू बल्कि मुहम्मल (बेमाअ्नी, बेमतलब) ठहरता है और सही तौर पर ख़ुदा को हज़रत ईसा की ज़बानी यूं बयान करना चाहिए था कि, اَنِّىۡ قَدۡ جِئۡتُكُمۡ لا نۡفُخُ فِيۡكم فَتَكُوۡنُ طَيۡرًا

जुम्ला सोइम इस मोअजिज़े की एहमीय्यत और अज़्मत पर दलालत कर रहा है। क्योंकि अगर इस में ये अल्फ़ाज़ بِاِذۡنِ اللّٰهِ ना होते तो ख़ुदा की सिफ़त-ए-ख़ालिक़ीयत में मसीह का शरीक होना लाज़िम आता इसलिए ख़ुदा ने इस को अपनी तरफ़ निस्बत देकर इस मुश्रिकाना ख़याल की तर्दीद फ़रमाई। और अगर ये कोई मामूली बात होती तो जुम्ला بِاِذۡنِ اللّٰهِ लाना बिल्कुल अबस था।

आयत माफ़ौक़ की तफ़्सीर हज़रत मिर्ज़ा ग़ुलाम अहमद क़ादियानी की तरफ़ से

मुझको यक़ीन है उम्मत-ए-क़ादियानी के दोनों फ़रीक़ इस पर मुत्तफ़िक़ हैं कि क़ुर्आने मजीद की तफ़्सीर करने और इस के निकात और मआरिफ़ के बयान करने में

जो फ़ज़ीलत[8] और मर्तबा ख़ुदा की तरफ़ से मिर्ज़ा साहब ग़फ़ुर-अल्लाह ज़नोबा को मिला था किसी दूसरे को नसीब ना हो सका। लिहाज़ा मुनासिब मालूम होता है कि हम आयत माफ़ौक़ के मुताल्लिक़ मिर्ज़ा साहब ग़फ़ुर-अल्लाह ज़नोबा की तरफ़ रुजू करें कि वो इस आयत की क्या तफ़्सीर करते हैं और पीरौ मुरीद का क़ज़ीया क़ारीइन के तस्फ़ीया पर छोड़ते हैं।

> तशखिज़-उल-अज़हान के ऐडीटर साहब एक मुसलमान मौलवी के एतराज़ के जवाब में लिखते हैं कि :-
>
> **अल-जवाब :** हवाले में सख़्त बद-दियानती से काम लिया गया है अस्ल बात यूं है कि हज़रत अक़्दस ने **خلق طیر** के मसअले को इस रंग में तो नहीं माना जिससे शिर्क लाज़िम आए यानी यूं नहीं हुआ कि हज़रत ईसा अलैहिस्सलाम ने ऐसे चमगादड़ बनाए हों जिनमें गोश्त-पोस्त सिलसिला तवालद व तनासिल हो। क्योंकि इस अम्र को ये रिवायत रोकती हैं।

(1) قُلْ هَلْ مِنْ شُرَكَآئِكُمْ مَّنْ يَّبْدَؤُا الْخَلْقَ

(तर्जुमा : "है कोई तुम्हारे माबूदों में से जो ख़ल्क़ करे?" (सूरह यूनुस आयत 34)

(2) اَمْ جَعَلُوْا لِلّٰهِ شُرَكَآءَ خَلَقُوْا كَخَلْقِهٖ فَتَشَابَهَ الْخَلْقُ عَلَيْهِمْ ؕ قُلِ اللّٰهُ خَالِقُ كُلِّ شَيْءٍ

तर्जुमा : "क्या ये ऐसे शुरका के क़ाइल हैं जिन्हों ने अल्लाह की तरह ख़ल्क़ किया हो और फिर दोनों की मख़्लूक़ मुश्तबा

---

8 मिर्ज़ा साहब के ये इल्हामात मुलाहिज़ा तलब हैं "और मैंने तुझको तेरे वक़्त के तमाम आलिमों पर फ़ज़ीलत दी।" "क़ुरआन शरीफ़ ख़ुदा की किताब और मेरे मुँह की बातें हैं।" (सिलसिला तस्नीफ़ात अहमदिया जिल्द अव्वल सफ़ा 482) (सुलतान)

हो गई हो। कह दे अल्लाह हर चीज़ का ख़ालिक़ है'' (सूरह अलरादायत 16

(3) إِنَّ الَّذِينَ تَدْعُونَ مِن دُونِ اللَّهِ لَن يَخْلُقُوا ذُبَابًا وَلَوِ اجْتَمَعُوا لَهُ ۖ

तर्जुमा : "जिनको ये पुकारते हैं तो वो सब के सब मिलकर एक मक्खी भी नहीं बना सकते।"

हाँ मोअजिज़े की हद तक इन अल्फ़ाज़ में मान लिया है।

"इन परिंदों में वाक़ई और हक़ीक़ी हयात नहीं पैदा होती थी। बल्कि सिर्फ़ अक़्ली और मजाज़ी और झूटी हयात जो अमल **الترب** के ज़रीये से पैदा हो सकती है।" (सफ़ा 218)

और इसे भी मोअजिज़ा ही क़रार दिया है। चुनान्चे मोअजिज़े की तारीफ़ में लिखा है :-

वाज़ेह हो कि अम्बिया के मोअजज़ात दो क़िस्म के होते हैं एक वो जो महज़ समावी उमूर होते हैं जिनमें इन्सान की तदबीर और अक़्ल को कुछ दख़ल नहीं होता जैसे शक़-उल-क़मर..... दूसरे अक़्ली मोअजज़ात जो इस ख़ारिक़ आदत (आदत और क़ुदरती क़ाएदे को तोड़ने वाला, अम्बिया के मोअजिज़े औलिया की करामात) अक़्ल के ज़रीये से ज़हूर पज़ीर होते हैं। जो इल्हाम इलाही से मिलती है।.... अब जानना चाहिए कि बज़ाहिर ऐसा मालूम होता है कि ये हज़रत मसीह का मोअजिज़ा हज़रत सुलेमान के मोअजिज़े की तरह सिर्फ अक़्ली था ये तारीख़ से साबित है कि इन दोनों में जिस उमूर की तरफ़ लोगों के ख़यालात झुके हुए थे (302) ये है अस्ल हवाला बज़ाहिर ऐसा मालूम होता है कि आपने हज़फ़ कर दिया फिर ऊपर की इबारत ना लिखी जिससे ये ज़ाहिर होता है कि हज़रत अक़्दस जिसे अक़्ली फ़र्मा रहे हैं। उस की निस्बत ये भी लिख चुके हैं कि ये अक़्ल ख़ारिक़ आदत तौर

> पर बज़रीया इल्हाम इलाही मिलती है। और माजिज़े ख़ारिक़ आदत और इल्हाम ही का नाम है। पस जब हज़रत-ए-अक़्दस ख़ल्क़ तीर (خلق طیر) को मोअजिज़ा तस्लीम कर रहे हैं तो फिर एतराज़ कैसा?" (नम्बर जिल्द 10 सफ़ा 25)

लफ़्ज़ अख्लक़ (اخلق) पर बहस

चूँकि मैंने इस किताब में इस बात का इल्तिज़ाम किया है कि हत्त-उल-इम्कान सिर्फ क़ुर्आन मजीद ही के नुक़्ते से बहस जारी रहे लिहाज़ा मैं अपने ज़ाती ख़याल और मसीहयाना अक़ीदे को महफ़ूज़ रखकर अपने करम फ़र्मा की ख़िदमत में अर्ज़ करता हूँ कि ख़्वाह आप लफ़्ज़ "ख़ल्क़" के मअनी अंदाज़ा करने के लें या अज़म करने या कुछ और हर सूरत में मुझको आपसे इत्तिफ़ाक़ है क्योंकि, اَنِّیْۤ اَخْلُقُ لَكُمْ مِّنَ الطِّیْنِ كَهَیْـَٔةِ الطَّیْرِ में कोई मोअजज़ाना रंग नहीं है। ये तो सिर्फ तम्हीद और तवज्जीया है فَاَنْفُخُ فِیْهِ فَیَكُوْنُ طَیْرًا की पस लफ़्ज़ نُفُخُ में एजाज़ है ना "अख्लक़" (اخلق) में, आप इस पर जिस क़द्र चाहें तब्अ-आज़माई फ़रमाएं।

(ज) आपकी और शक़ों की तरह ये शक़ भी सरासर ग़लत है। इस का सही तर्जुमा ये है कि "और मैं तुमको बतला देता हूँ कि जो कुछ खाते हो और जो कुछ रखते हो।" "और आपके तक़द्दुस मआब का ये कहना भी बिल्कुल लगू है कि :-

> "गोया हलाल व हराम के मुताल्लिक़ भी कुछ अहकाम देते थे।"

(निकात-उल-क़ुर्आन हिस्सा सोम आले-इमरान सफ़ा 245)

क्योंकि इसी आयत के तहत में एक दूसरी आयत (सूरह आले-इमरान 50) وَ لِاُحِلَّ لَكُمْ بَعْضَ الَّذِیْ حُرِّمَ عَلَیْكُمْ है जिसमें हलाल व हराम का हुक्म है। पस आयत माफ़ौक़ में बजुज़ अख़्बार अन अल-गैब के और कोई बात समझ में नहीं आती है।

(द) हमें बेहद अफ़्सोस तो इस बात का है कि आपने अरबी को भी उर्दू पर क़ियास फ़रमाया है कि बिला रोक टोक जिस लफ़्ज़ को जहां चाहा वहां रख दिया ख़्वाह उस लफ़्ज़ को उस जगह से मुनासबत हो या ना हो। लेकिन अरबी के साथ ये

सुलूक नहीं किया जा सकता है। अरबी में कस्रत के साथ ऐसे अल्फ़ाज़ हैं जो ख़ास ख़ास मवाक़े के लिए ख़ुसूसी माअनों के साथ मख़्सूस हैं। चुनान्चे "फ़िक़्ह-उल-लुग़त" में जो इस फ़न में एक आला पाये की किताब है इस क़िस्म के अल्फ़ाज़ के लिए एक अलैहदा बाब मख़्सूस है। और इसी बाब में अल्लामा इब्ने फ़ारस लिखते हैं कि :-

(ومن ذالك المائدة) لايقال لها مائدة حتى يكون عليها طعام لان المائدة من مادنى يميدنى انا اعطاك والاسمها خوان

तर्जुमा : "यानी माइदा उस वक़्त तक माइदा नहीं कहा जा सकता है जब तक उस पर तआम ना हो क्योंकि माइदा مادنى يميدنى से माख़ूज़ है। जिसके मअनी अता करने के हैं। और जिस पर तआम ना हो उस को ख़वान कहते हैं।"

इमाम सक़ालबी फ़र्माते हैं कि :-

ولا يقال مائدة الا اذا كان عليها الطعام والا فهى خوان

तर्जुमा : "यानी माइदा को माइदा नहीं कहते हैं जब तक उस पर तआम ना हो और अगर इस पर तआम नहीं है तो उस को ख़वान कहते हैं।"

(अल-मज़हर अज़ इमाम सियूती रहमतुल्लाह मत्बूआ मिस्र हिस्सा अव्वल सफ़ा 225)

इसी तरह इमाम राग़िब रहमतुल्लाह ने अपने मुफ़रिदात में लिखते हैं कि :-

"والمائدة قطبق الذى عليه الطعام" यानी माइदा उस तबक़ को कहते हैं जिस पर तआम हो।"

पस आपका ये फ़रमाना कि "माइदे से यहां मुराद वाक़ई खाने का दस्तर ख़्वान नहीं है।" किस क़द्र वहशत अंगेज़ ग़लती है। क़िब्ला इसी लिए मैं बार-बार अर्ज़ कर रहा हूँ कि आप अरबी का इल्म हासिल करें।

(ह) शुरू में मेरा इरादा था कि मैं इस शक़ पर इल्म-ए-बयान की रु से बहस करूँ क्योंकि इस का ताल्लुक़ ज़्यादातर इल्म-ए-बयान के साथ है। लेकिन आपके

मज़्मून को ग़ौर के साथ देखकर मैं अपने इरादे के बदलने पर मज्बूर हुआ क्योंकि आप के मज़्मून से साफ़ मालूम होता है कि आप इस इल्म से बिल्कुल आरी हैं, इसलिए मैं एक आम फहम पैराये में इस पर नज़र डालूँगा। यानी अगर एक लफ़्ज़ जो कई माअनों में मुस्तअमल है क़ुर्आन शरीफ़ में कस्रत के साथ एक ही मअनी में मुस्तअमल हो जाए तो इस से हरगिज़ ये नतीजा नहीं निकल सकता कि दीगर मुक़ामात में भी इस के वही मअनी होंगे। क़ुर्आन मजीद में कस्रत के साथ ऐसी नज़ीरें (मिसालें) मौजुद हैं जिनसे साफ़ साबित होता है कि एक लफ़्ज़ एक ही मअनी में कस्रत के साथ मुस्तअमल होने के बावजूद दूसरे मुक़ाम में और माअनों में भी मुस्तअमल हुआ है। यहां सिर्फ चंद मिसालों पर इक्तिफ़ा किया जाता है :-

(1) क़ुर्आन मजीद में लफ़्ज़ अस्हाब-उन-नार (اصحاب النار) का इतलाक़ हमेशा काफ़िरों और इस क़िस्म के दूसरे लोगों पर हुआ है लेकिन सूरह मुद्दस्सिर में इस का इतलाक़ फ़रिश्तों पर हुआ है।

(2) लफ़्ज़ बाअल (بعل) का इतलाक़ (सूरह बक़रह व निसा) में शौहर पर हुआ है। और सूरह साफ़्फ़ात में बुत पर।

(3) लफ़्ज़ **عَود** और عادہ का इतलाक़ तमाम क़ुर्आन मजीद में तकरार फ़ेअल पर हुआ है इस आयत में कि **والذین یظاھرون من نسا ٕھم ثم یعدون لماقالو** (मुजादिला) तौबा यहां पेशमानी पर हुआ है।

(4) लफ़्ज़ ریب का इतलाक़ क़ुर्आन मजीद में शक पर हुआ है मगर आयत ریب المنون (अल-तूर) में हवादिस-ए-ज़माना पर हुआ है।

(4) लफ़्ज़ بروج का इतलाक़ हर जगह कवाकिब पर हुआ है मगर **فِيْ بُرُوْجٍ مُّشَيَّدَةٍ** (सूरह अल-निसा आयत 78) में ऊंचे मज़्बूत महल पर हुआ है। (मज़ीद ईज़ाह के लिए तफ़्सीर इत्तिक़ान मुलाहिज़ा हो)

पस अगर लफ़्ज़ अंधे का और कौड़ी का और मुर्दे का इतलाक़ सिर्फ एक ही मअनी यानी रुहानी बीमारी और रुहानी मौत पर भी हुआ। और कस्रत के साथ भी हुआ हो तो भी इस से ये नतीजा नहीं निकल सकता कि कुल क़ुर्आन में अज़

इब्तिदाता इंतिहा उनके यही मअनी हैं। मसलन एक आयत ये है कि إِنَّكَ مَيِّتٌ وَّإِنَّهُمْ مَّيِّتُوْنَ ﴿٣٠﴾ (सूरह ज़ुमर आयत 30) "ऐ मुहम्मद ﷺ तू भी मुर्दा है और यह काफ़िर भी मुर्दे हैं।" आपके नज़रिये के लिहाज़ से इस आयत के ये मअनी होंगे कि "ऐ मुहम्मद (मआज़-अल्लाह) तू भी रूहानी तौर पर मुर्दा है और ये काफ़िर भी रुहानी तौर पर मुर्दे हैं।"

چو کفر از کعبہ برخیزد کجا ماند مسلمانی!

"अब मैं इस बहस को क़ुर्आन-ए-मजीद की एक दूसरी आयत पर ख़त्म करता हूँ जिससे साफ़ ज़ाहिर होता है कि "अंधे" को बीना करना, "कौड़ी" को शिफ़ा देना और "मुर्दे" को ज़िंदा करना हक़ीक़ी माअनों में हज़रत ईसा अलैहि सलातो वस्सलाम के मोअजिज़े थे ना कुछ और वो आयत ये है :-

وَإِذْ تَخْلُقُ مِنَ الطِّيْنِ كَهَيْئَةِ الطَّيْرِ بِإِذْنِيْ فَتَنْفُخُ فِيْهَا فَتَكُوْنُ طَيْرًا بِإِذْنِيْ وَتُبْرِئُ الْأَكْمَهَ وَالْأَبْرَصَ بِإِذْنِيْ وَإِذْ تُخْرِجُ الْمَوْتٰى بِإِذْنِيْ وَإِذْ كَفَفْتُ بَنِيْ إِسْرَآءِيْلَ عَنْكَ إِذْ جِئْتَهُمْ بِالْبَيِّنٰتِ فَقَالَ الَّذِيْنَ كَفَرُوْا مِنْهُمْ إِنْ هٰذَآ إِلَّا سِحْرٌ مُّبِيْنٌ

(सूरह माइदा आयत 110)

मैं अपने फ़ाज़िल मुख़ातिब से पूछता हूँ कि अगर वो बातें जिनका ज़िक्र इस आयत में है मोअजिज़ा ना थीं तो काफ़िरों का ये कहना कि ये सरीह जादू है क्या मअनी रखता है? यही वजह है कि तमाम मुफ़स्सिरीन ने उमूर-ए-माफ़ौक़ को बिल-इत्तिफ़ाक़ मोअजिज़ा मान लिया है।

अगर इन वाक़ियात का तारीख़ी सबूत मौजूद ना होता तो मुम्किन है कि आपकी तावील को दुरुस्त तस्लीम कर लिया जाता लेकिन जब अनाजील में इन वाक़ियात की तफ़्सील मौजूद है तो इस तारीख़ी सबूत की मौजूदगी में इन बातों को इस्तिआरे के रंग में मानना सरीह ग़लती है। वस्सलाम

सुल्तान